छत्रसाल-ग्रन्थावली

वियोगी हरि

श्रीछत्रसाल-स्मारक-समिति

पन्ना

छत्रसाल-ग्रन्थावली

[बुन्देल-खंड-केसरी महाराज छत्रसाल-रचित ग्रन्थों का समुच्चय]

सम्पादक

वियोगी हरि

प्रकाशक

श्रीछत्रसाल-स्मारक-समिति

राज्य पन्ना (मध्य भारत)

पहली बार 1000 | संवत् १९९३ | मूल्य १)

प्रकाशक—
श्रीछत्रसाल-स्मारक-समिति
पन्ना (मध्य भारत)

पुस्तक मिलने का पता—
साहित्य-भवन लिमिटेड,
इलाहाबाद

मुद्रक—
के० पी० दर, इलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस
इलाहाबाद

बुन्देलखण्ड-केसरी महाराज छत्रसाल।
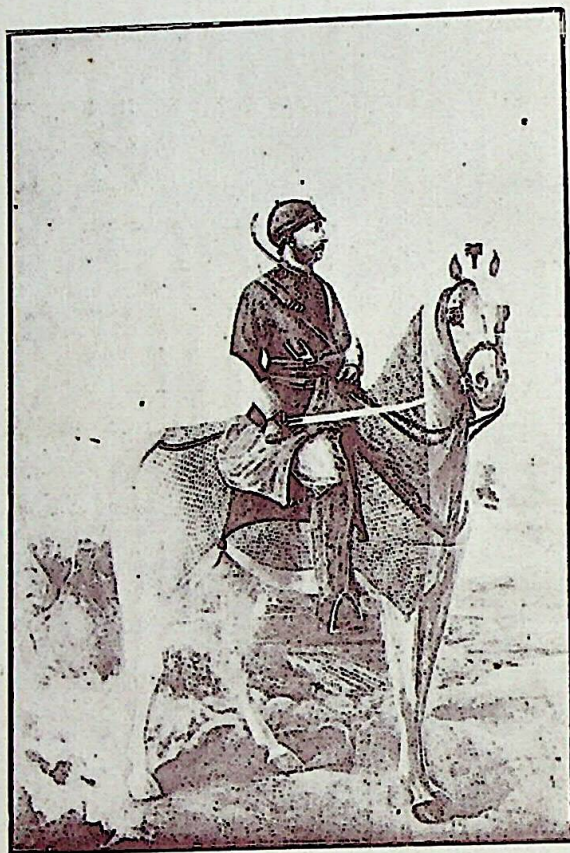
ध्यानिन में ध्यानी और ज्ञानिन में ज्ञानी अहैं, पंडित पुरानी प्रेम-बानी अरथाने का।
साहब सों सच्चा, कूर कर्मनि में कच्चा, छता, चंपत कौ बच्चा, सेर सूरबीर बाने का॥
मित्रन कों छत्ता, दीह सत्रुन कों कत्ता, सदा ब्रह्म-रस-रत्ता एक कायम ठिकाने का।
नाहिँ परवाही, न्यारा नौकिया सिपाही, मैं तौ नेही चाह-चाही एक स्यामा स्याम पाने का॥

इंडियन प्रेस, लि०, प्रयाग।

भूमिका

ग्रन्थकार का संक्षिप्त परिचय

बुन्देलखण्ड का स्थान भारतवर्ष के इतिहास में राजस्थान से कम ऊँचा नहीं है। बुन्देला राजपूतों के नाम पर इस प्रान्त का यह नाम पड़ा है। बुन्देला वंश सुप्रसिद्ध सूर्यवंशी गहिरवारों से निकला है। इनका प्रसिद्ध और प्राचीन राज्य ओर्छा है। इस राज्य में मधुकरसाह, वीरसिंह देव और प्रतापरुद्र जैसे यशस्वी और प्रतापी नरेश हुए हैं। महाराज प्रतापरुद्र के बारह पुत्र थे। तीसरे पुत्र का नाम उदयाजीत था। इन्हें महेवा* की जागीर मिली थी। इनसे चौथी पीढ़ी में चंपतराय हुए। यह बड़े ही प्रतापी और शूरवीर थे। इनके सम्बन्ध में लाल कविने अपने छत्र-प्रकाश में लिखा है—

प्रलय पयोधि उमंड में ज्यों गोकुल जदुराय।
त्यों बूड़त बुन्देल-कुल राख्यो चंपतराय॥

चंपतराय के पाँच पुत्र थे—सारवाहन, अंगदराय, रतनसाह, छत्रसाल और गोपालराय। सारवाहन बचपन से ही युद्धप्रिय थे। यह सिर्फ १४ वर्ष की ही अवस्था में मुग़ल-सेनापति बाक़ीख़ाँ के निर्दय हाथ से, लड़ते-लड़ते, क्षात्रगति को प्राप्त हुए। कहते हैं, इसी बुन्देल-अभिमन्युने, अपने क्रूर शत्रुओं से बदला चुकाने के लिये, फिर अपनी माता के गर्भ से जन्म लिया। और अब की बार यह 'छत्रसाल' के नाम से प्रसिद्ध हुए।

चित-चीते साँचे भये, सुपन माइ के चारु।
प्रगट्यो चंपतराय के छत्रसाल अवतारु॥

[छत्र-प्रकाश]

ज्येष्ठ शुक्ला ३, संवत् १७०६ वि० को छत्रसाल का जन्म हुआ। बालक छत्रसाल प्रायः संपूर्ण छत्रधारी के लक्षणों से सम्पन्न थे। भगवद्भक्ति तो इनकी जन्मजात थी। ग्यारह वर्ष की अवस्था में ही यह लिखने-पढ़ने और अस्त्र-शस्त्र चलाने में निपुण हो गये थे। छत्रप्रकाश में लिखा है—

पूरब-पुन्य-प्रताप तें सकल कला अनयास।
बसी आय छत्रसाल-उर, दिन-दिन बढ़ै प्रकास॥

संवत् १७२१ में राव चंपतराय का स्वर्गवास हो गया। छत्रसाल उन दिनों अपने मामा साहबसिंह धँधेरे के यहाँ सहरा में रहते थे। पिता की मृत्यु के बाद वे अपने भाई अङ्गदराय के पास देवगढ़ चले गये। भाई की सलाह से उन्होंने बादशाह की सेवा स्वीकार कर ली। जयपुर-नरेश जयसिंह

---

*यह गाँव बड़ी मऊ (झांसी) से पाँच कोस दक्षिण की ओर है। आजकल इसे 'नुना महेवा' कहते हैं।

के साथ शिवाजी के विरुद्ध लड़ने को वे भी गये। छत्रसाल बड़ी वीरता से लड़े। केवल उन्हीं के पुरुषार्थ से शाही सेना ने देवगढ़ का क़िला जीता। शाही सेना का सेनापति बहादुरखाँ था। ख़िलअत उसी को दिया गया और नाम भी उसी का हुआ। छत्रसाल को किसी ने पूछा तक नहीं। इस कृतघ्नताने उनके विचारों में भारी परिवर्तन कर दिया। कल तक वे जिस मुग़ल-साम्राज्य के साधक थे, आज उसके बाधक बन गये। छत्रपति शिवाजी से मिलना उन्होंने निश्चित किया। क्योंकि हिन्दुत्व के एकमात्र रक्षक उनकी समझ में शिवाजी ही थे। दुर्गम मार्ग से वे किसी तरह सिंहगढ़ पहुँचे। शिवाजी ने उन्हें गले लगाया। लाल कवि के शब्दों में, शिवाजी ने उस होनहार बुन्देल-कुल-दीपक को यह उपदेश किया—

"करौ देश कौ राज छतारे। हम तुम तें कबहूँ नहिं न्यारे॥
तुरकन की परतीति न मानौ। तुम केहरि, तुरकन गज जानौ॥
हम तुरकन पर कसी कृपानी। मारि करैंगे कीचक घानी॥
तुमहूँ जाय देश दल जोरौ। तुरुक मारि तरवारिन तोरौ॥
छत्रिन की यह वृत्ति सदाई। नित्य तेग की खायँ कमाई॥
गाय वेद बिप्रन प्रतिपालैं। घाव ऐंड़धारिन पर घालैं॥
तुम हौ महावीर मरदाने। करिहौ भूमि-भोग हम जाने॥
जो इतही तुम को हम राखैं। तौ सब सुजसु हमारो भाखैं॥
ताते जाय मुग़ल-दल मारो। सुनिये स्रवननि सुजसु तिहारो॥"

बस—

यह कहि तेग मँगाय बँधाई। वीर वदन दूनी दुति आई॥

रुद्रावतार शिवाजी का खड्ग, प्रसाद में, पाकर छत्रसाल की नसों में ओजान्वित रुधिर दौड़ने लगा। आज के दिन से उन्होंने मुग़ल-साम्राज्य से आजन्म लड़ते रहने की प्रतिज्ञा ठान ली। शिवा-छत्रसाल-मिलाप संवत् १७२४ में हुआ था। धन्य वह वर्ष!

तत्कालीन ओर्छा-नरेश महाराज सुजानसिंहने भी छत्रसाल को मुग़लों से लड़ने को उत्तेजित किया। छत्रसालने महाराज के सम्मुख तलवार बाँध कर वीरोचित वचन दिया—

महाराज, हम हुक्म तें, बाँधत हैं किरपान।
तौलौं फिकर न आइहै, जौलौं घट में प्रान॥

[छत्रप्रकाश]

भ्रातृ-स्नेह के मारे महाराज सुजानसिंह पुलकित और गद्‌गद हो गये। छत्रसाल को छाती से लगा कर बोले—

हिन्दु-धरम जग जाय चलाओ। दौरि दिली-दल हलनि हलाओ॥
अभय देहु निज बंस कों, फतह लेहु फरमाह।
छत्रसाल, तुम पै सदा, करैं बिसम्भर छाँह॥

उन्होंने मुग़ल-साम्राज्य के विरुद्ध बड़ी ही निपुणता से आन्दोलन करना आरम्भ कर दिया।

धीरे-धीरे कई सरदार, जो शाही सेना में नौकर थे, उनसे जामिले। फिर भी कुल मिलाकर तीस सवार और तीन सौ तुवकदार ही छत्रसाल के साथ हुए!

संवत् १७२८ के लगभग कई लड़ाइयाँ जीत कर छत्रसाल ने गढ़ाकोटा का क़िला अपने अधीन कर लिया। सिरौंज में आपने मालवा के सूबेदार मुहम्मद हासिम को बुरी तरह से हराया। औड़ेरा, गौनो गाँव, धौरी, सागर, पियरहट, हनूटेक, धामौनी आदि स्थानों पर भी आप का आधिपत्य हो गया। धामौनी स्थान पर आप ने मुग़ल-सेनापति खालिक़ को हरा कर क़ैद कर लिया। लड़ाई का कुल व्यय और तीस हज़ार रुपया ख़िराज देने का वचन देने पर खालिक छोड़ दिया गया। पर छूटते ही वह अपना वचन पलट गया। इतना ही नहीं, आस-पास के ज़मीन्दारों को भी उसने सचेत कर दिया कि, ख़बरदार! डाकू छत्रसाल को कोई एक कानी कौड़ी भी न देना। छत्रसाल ने वाँसा के ज़मीन्दार केशवराय दाँगी से कुछ रुपया माँगा। उसने खालिक की आज्ञा को न्याय-संगत मान कर छत्रसाल को साफ़ जवाब दे दिया कि, मैं डाकुओं से अपनी रक्षा नहीं चाहता। छत्रसाल ऐसा अपमान कब सहन करनेवाले थे। दोनों में द्वन्द्वयुद्ध की बात छिड़ गई। केशवराय भी महान् वीर था। ख़ासा युद्ध हुआ। अन्त में दाँगी सरदार मारा गया। केशवराय के पुत्र को आपने बड़ी प्रतिष्ठा के साथ सिरोपाव दिया, जो महाराज का आजन्म भक्त और सेवक रहा।

संवत् १७३७ में आपने औरङ्गज़ेब के कृपा-पात्र सेनापति तहव्वर ख़ाँ को परास्त किया। इसी प्रकार सदरुद्दीन, अनवर ख़ाँ और हमीद ख़ाँ नामक सूबेदारों और सेनापतियों को आपने अपने बाहु-बल से पराजित किया। अब तो औरङ्गज़ेब बहुत घबराया। संवत् १७४६ में एक बड़ी भारी सेना लेकर, बादशाह के हुक्म से, अब्दुस्समद छत्रसाल पर चढ़ आया। उसे आपने बेतवा नदी के किनारे बुरी तरह से हराया। लाल कविने इस युद्ध का बड़ा ओजस्वी वर्णन किया है—

विरुझ्यौ रन छत्रसाल बुंदेला। कियौ खभरि खग्गनि खिझ खेला॥
एक उमक अरु दमक सँहारै। लेहि साँस जब वीसक मारै॥
छत्रसाल जिहिं दिसि पिलै, काढ़ि धोप कर माहिँ।
तिहिं दिसि सीस गिरीस पैं, वनत बटोरत नाहिँ॥
छत्रसाल जिहिँ दिसि धसि आवै। तिहिं दिसि बखतर पोस ढहावै॥
कटि अरि-मुण्ड उछालत कैसे। बटनि खेल खेलतु नट जैसे॥
रुधिर भभकि रुंडन ज्यों मंडी। मानहुँ जरत टुण्ड बनखंडी॥

× × ×

डेरन को करनातै दीनी। लोथैं माँगि समद सब लीनी॥
दाग देत घटिका इक बीती। गोरैं खनत राति सब बीती॥
चौथ चुकाइ कूच निरधारे। समद कलिन्दी पास सिधारे॥*

इस महाविजय के उपरान्त वीरवर छत्रसाल पन्ना को चले गये। जब तक शरीर के सारे घाव

---

*महाकवि भूषनने भी इस युद्ध पर एक ओजस्वी कवित्त लिखा है। देखिये—

अत्र नृप छत्रसाल खिझ्यौ खेत बेतवै के,
उत तें पठानन हू कीनी झुकि झपटैं।

भर नहीं गये, तब तक आप पन्ना* में ही रहे।

संवत् १७५८ में महाराज ने मुराद खाँ और दलेल खाँ को पराजित किया। तदुपरान्त भदौंध को आपने अपने अधीन किया। संवत् १७५९ के लगभग आपने सैयद अफ़ग़ान को और संवत् १७६१ में शाहकुली को हराया।

इस प्रकार एक के बाद दूसरी विजय होने पर महाराज छत्रसाल प्रायः समस्त बुन्देलखंड के अधिपति बन गये। तीन-चार सौ सिपाहियों के साथ छोटी-मोटी लूटमार जिन्होंने एक दिन आरम्भ की थी, आज वे अपने प्रचण्ड बाहु-बल से राज-राजेश्वर बन बैठे। वास्तव में 'बुन्देलखण्ड-केसरी' की उपाधि उनके पूर्णतः उपयुक्त है। आपके अधिकृत राज्य की सीमा किसी कवि ने इस दोहे में व्यक्त की है—

इत जमुना उत नर्मदा, इत चंबल उत टौंस।
छत्रसाल सों लरन की, रही न काहू हौस॥

इस राज्य की वार्षिक आय दो करोड़ रुपये के लगभग थी।

संवत् १७६५ में बादशाह बहादुरशाहने महाराज छत्रसाल को उपर्युक्त इलाक़े का अधिपति स्वीकार कर लिया। इसके उपलक्ष में महाराजने बादशाह के लिये लोहागढ़ का दुर्जय क़िला जीत दिया। महाराज को बादशाह ने अपना मंसबदार बनाना चाहा, पर आपने यह तुच्छ पद स्वीकार नहीं किया। बोले—कौन किसका मंसबदार होता है? जिसका नाम विश्वंभर है, जिसका बाँका विरद है, उसी प्रभु के हम मंसबदार हैं—

मनसबदार होइ को का कौ। नाम विसुम्भर सुनि जग बाँकौ॥
(छत्र-प्रकाश)

इसी प्रसंग पर महाराजने कदाचित् श्रीमुख से यह पद्य रच कर कहा होगा—

जाकौ मानि हुकुम सुभानु तम-नासु करै,
चन्द्रमा प्रकासु करै नखत दराज कौ।
कहै छत्रसाल, राज-राज है भँडारी जासु,
जाकी कृपा-कोर राज राज सुर-राज कौ।
जुग्म कर जोरि-जोरि हाजिर त्रिदेव रहैं,
देव परिचार गहैं जाके ग्रह-काज कौ।
नर की उदारता में कौन है सुधार, मैं तौ,
मनसबदार सरदार ब्रजराज कौ॥

हिम्मति बड़ी के गबड़ी के खिलवारन लौं,
दैत सै हजारन हजार बार चपटैं॥
भूपन भनत, काली हुलसी असीसन कों,
सीसन कों ईस की जमाति जोर जपटैं।
समद लौं समद की सेना त्यों बुँदेलन की,
सेलैं समसेरैं भई बाड़व की लपटैं॥

*इस सुप्रसिद्ध नगर के नाम पद्मावती, पर्णा और परना भी हैं।

महाराज की वृद्धावस्था भी शान्ति से न बीती। उनका तो सारा जीवन दैवने क्रान्ति-उपासना करने को ही बनाया था। औरङ्गज़ेब की मृत्यु के बाद मुग़ल-साम्राज्य क्षीण होने लगा। कई सूबेदार और सेनापति जहाँ-तहाँ स्वतन्त्र बन बैठे। मुहम्मद खाँ बंगस जफ़र जंग नामक एक बहादुर पठान फ़र्रुखाबाद और इलाहाबाद का ख़ुदमुख्तार नवाब बन बैठा। संवत् १७८६ में उसने अस्सी हज़ार सवार और चार सौ हाथी लेकर बुन्देलखण्ड पर चढ़ाई कर दी। महाराज की अवस्था उस समय अस्सी वर्ष की थी। दोनों पाटवी राजकुमारों * में कुशल कूट-नीतिज्ञ औरङ्गज़ेब ने पहले ही अनबन करा दी थी। महाराज उन दिनों अपने छोटे पुत्र जगतराज के साथ जैतपुर में रहते थे। महाराज को निश्चय हो गया कि केवल अपनी सेना से उद्धत बङ्गस को परास्त नहीं किया जा सकता; अतः ऐसे मौक़े पर बाजीराव पेशवा से सहायता लेनी आवश्यक है। आपने तत्क्षण पेशवा को यह दोहा पत्र में लिख भेजा—

जो बीती गजराय पर, सो बीती अब आय।
बाजी जाति बुंदेल की, राखौ बाजीराय॥

वीरवर बाजीराव अपने स्वामी शिवाजी की पूर्व मैत्री का स्मरण करके एक लाख सवार ले तुरन्त सहायतार्थ पहुँचे और बङ्गस को जैतपुर में घेर लिया। बङ्गस परास्त हुआ और विजय-माल बूढ़े बाबा के कंठ में पड़ी। इस उपकार के बदले में महाराजने पेशवा को अपना बड़ा पुत्र मान कर उन्हें राज्य का सवाया भाग दिया, जिसमें सागर, गुरसराय, जालौन, बाँदा, कालपी इत्यादि का प्रान्त था।

महाराज मऊ † और पन्ना दोनों में ही रहा करते थे। मऊ के समीप आपने, अपने पूर्वजों की जागीर के गाँव के नाम पर, एक दूसरा महेवा गाँव बसाया। पीछे मऊ-महेवा मिलकर एक बड़े नगर में परिणत हो गये। मऊ-महेवा पर, वास्तव में, महाराज का बड़ा प्रेम था। आप का यह नियम-सा हो गया था कि पन्ना से महीनों नित्य घोड़े पर ५५ मील दूर मऊ-महेवा जाया-आया करते थे!

महाराज के तेरह रानियाँ और बावन पुत्र थे। इससे यह न समझना चाहिए कि वे बड़े विषयी थे। इतना भारी राज्य स्थापित करके उसकी रक्षा के लिये ही उन्होंने अनेक वीर पुत्र उत्पन्न किये, यद्यपि परिणाम इसके बिल्कुल प्रतिकूल हुआ। हृदयशाह और जगतराज पाटवी राजकुमार थे। हृदय शाह बड़े थे और जगतराज छोटे। उन्हें पन्ना का आधिपत्य मिला और इन्हें जैतपुर का। पन्ना में पन्ना, कालिंजर, शाहगढ़ आदि परगनों की ३८ लाख की भूमि थी, और जैतपुर में जैतपुर, बाँदा, चरखारी इत्यादि की ३३ लाख की। चरखारी, अजयगढ़, बिजावर और सरीला की रियासतें जैतपुर से निकली हुई हैं। पन्ना अब भी वही है, पर इसमें से छत्रपुर, मैहर, पालदेव इत्यादि निकल कर स्वतंत्र रियासतें हो गये हैं और कालिंजर आदि परगने अँगरेज़ी राज्य में चले गये हैं। परिहार रानी से उत्पन्न महाराज के पुत्र राव पदमसिंहजी के वंशधर जिगनी नाम की जागीर में और बघेलिन रानी के पुत्र भरतसिंहजी के वंशज जसो की जागीर में अद्यापि राज करते हैं। लुगासी नाम की जागीर पर भी महाराज हृदय

*हृदयसाह और जगतराज।

†मऊ छत्रपुर राज्य से १० मील के अन्तर पर है। नौगांव की छावनी यहां से ४ मील है। मऊ और महेवा ये दोनों ही आज ऊजड़ से हैं।

शाह के एक पुत्र सालिमसिंहजी के वंशधर शासन करते हैं। भारतवर्ष की सहोदरा फूट देवी की कृपा से इतना भारी स्वबाहु-बल-अर्जित राज्य छिन्न-भिन्न हो गया।

महाराज छत्रसाल जैसे वीर योद्धा थे, वैसे ही कुशल शासक भी थे। उन्होंने बहुत-कुछ अंशों में राम-राज्य स्थापित कर दिया था। प्रजा का पुत्रवत् लालन-पालन करते थे। मदोद्धत को यथेष्ट दंड देना और शरणागत, दीन और गो-ब्राह्मणों की रक्षा करना उनका एकमात्र शासन-ध्येय था। उद्योगी तो थे ही। उन्हें अपने इस महामन्त्र से बड़ी सफलता प्राप्त हुई—

"जो जानिहै सो मानिहै, जो न मानिहै सो जानिहै।"

आप की किसी जातिविशेष के साथ जन्म-जात शत्रुता न थी; आप तो अत्याचारी के शत्रु थे, वह हिन्दू ही क्यों न हो। धन-संग्रह के अर्थ आप अपना ही हरा-भरा देश उजाड़ना उचित नहीं समझते थे। इस उद्देश की पूर्ति के लिये आप शाही खज़ानों पर ही धावा मारते थे। दीन दुर्बल देश-भाइयों को तो आप उलटा देते थे। यह तो मैं लिख ही चुका हूँ कि प्रजा-पालन ही उनका सर्वश्रेष्ठ लक्ष्य था। आदर्श राजा बनने के लिये वे अपने इस दोहे में कैसा महान् उपदेश दे गये हैं—

राजी सब रैयत रहै ताजी रहै, सिपाहि।
छत्रसाल, ता राज कौ वार न बाँको जाहि॥

निम्नलिखित पद्य में तो आप ने राज-नीति का सारा निचोड़ भर दिया है। देखिये—

चाहौ धन धाम भूमि भूषन भलाई भूरि
सुजस सहूरजुत रैयत कों लालियौ।
तोड़ादार घोड़ादार वीरन सों प्रीति करि
साहस सों जीति जंग, खेत तें न चालियौ॥
सालियौ उदंडनि कों, दंडनि कों दीजौ दंड,
करिकैं घमण्ड घाव दीन पै न घालियौ।
विन्ती छत्रसाल करै, होय जो नरेस देस
रैहै न कलेस लेस मेरो कह्यौ पालियौ॥

यही कारण था कि वे साधारण स्थिति से बढ़ते-बढ़ते 'बुंदेल-खंड-केसरी' जैसी अनुपम उपाधि के अधिकारी हो सके। वास्तव में, महाराज छत्रसाल का बुंदेलखंड में वही स्थान है, जो महाराणा प्रताप का राजस्थान में, छत्रपति शिवाजी का महाराष्ट्र में या गुरु गोविंदसिंह का पंजाब में। चारों एक ही पंथ के पथिक थे।

महाराज की सफलता-प्राप्ति के मुख्य कारणों में स्वामी प्राणनाथ का सत्संग-लाभ भी एक था। स्वामीजी काठियावाड़ प्रान्त के रहनेवाले थे। इनका पहले मेहराज*नाम था। जामनगर के सुप्रसिद्ध धनी देवचन्दजी के यह शिष्य थे। उन्हींने मेहराज को 'प्राणनाथ' की पदवी दी थी। इसमें संदेह नहीं कि स्वामीजी एक पहुँचे हुए संत थे। उन्होंने ज्ञान, भक्ति और कर्म का समन्वय सिद्ध किया है। क़ुरान

*बख्शी हंसराज-लिखित 'मेहराज-चरित' नामक एक हस्तलिखित काव्य मुझे पन्ना के राजकीय पुस्तकालय में मिला है।

और पुरान दोनों का मथन उन्होंने किया था। उनका धर्म-ग्रन्थ 'कुलज़म स्वरूप' उनके संप्रदायवालों में आज भी मान्य और प्रतिष्ठित है। स्वामीजी महाराज से मऊ में मिले। महाराज के हृदय में स्वामी जी के प्रति अगाध श्रद्धा-भक्ति उत्पन्न हो गई। स्वामीजी महाराज को बराबर उपदेश करते रहे। उनके वीरोचित्त उपदेश के कारण महाराज को अपने दिग्विजय में महती सफलता प्राप्त हुई। जिस प्रकार समर्थ रामदासजीने छत्रपति शिवाजी को अपने अनुभव-पूर्ण उपदेशों के द्वारा नैतिक बल प्राप्त कराया, उसी प्रकार संत-प्रवर स्वामी प्राणनाथजीने महाराज छत्रसाल को अपने अमूल्य उपदेशों और सामयिक परामर्शों से बड़ी सहायता पहुँचाई*।

अब हम, संक्षेप में, महाराज का शील-स्वभाव लिख कर उनका जीवन-वृत्त समाप्त करते हैं। उनका स्वभाव-चित्रण उन्हीं के शब्दों में क्यों न देखें? धन्य!

ध्यानिन में ध्यानी और ज्ञानिन में ज्ञानी अहौं,
पंडित पुरानी प्रेम-बानी-अरथाने का।
साहब सों सचा, क्रूर कर्मनि में कचा, छता,
चंपत कौ बचा, सेर सूरबीर बाने का॥
मित्रन कों छत्ता, दीह सत्रुन कों कत्ता, सदा
ब्रह्म-रसरत्ता, एक कायम ठिकाने का।
नाहिं परवाही, न्यारा नौकिया सिपाही, मैं तौ
नेही, चाह-चाही एक स्यामा-स्याम† पाने का॥

बलिहारी, इस स्वर्गीय आदर्श पर!

कवि-जगत् में छत्रसाल

हमारे आश्चर्य की सीमा नहीं रहती, जब हम देखते हैं कि महाराज छत्रसाल कवि-जगत् में भी एक ऊँचा स्थान रखते हैं। आश्चर्य इस बात पर नहीं है कि राजे-महाराजे कवि-पद प्राप्त करने के अयोग्य हैं। यह बात नहीं है। अनेक नरेशों ने कविताएँ लिखी हैं। उनमें कई तो, वास्तव में, बड़े ऊँचे कवि हुए हैं। पर यहाँ एक दूसरी ही बात आ उपस्थित होती है। प्रायः सरस्वती के लाड़िले जिन नृपतियों और श्रीमानों ने कवि-कीर्ति कमाई है, वे शान्ति-सुख-पूर्ण वातावरण में विचरे और रहे। और छत्रसाल? यहाँ तो घोड़े की रकाब पर से पैर ही नहीं हटाया। बीहड़ जंगलों, निर्जन उपत्यकाओं और

---

*स्वामी प्राणनाथजी के अनेक चमत्कारों की कथा सुनने में आती है। कुछ न कुछ चमत्कार प्रायः प्रत्येक ऊंचे संत की जीवनी में ग्रथित मिलते हैं। वही बात प्राणनाथजी के भी साथ हुई है। हमारे कहने का यह तात्पर्य नहीं कि पहुँचे हुए महात्मागण चामत्कारिक कार्य कर नहीं सकते, पर हमारी तुच्छ दृष्टि में सांसारिक चमत्कार उनके उज्ज्वल और महान् जीवन के द्योतक नहीं। उनका सबसे बड़ा चमत्कार तो उनका आत्म-साक्षात्कार ही है। यही उनके चमत्कार-चित्रों का एक अजर-अमर 'अलबम' है। पर, भक्तजनों को अतिरंजन किये बिना कल कहां?

†'छत्र-विलास' में प्राणनाथ पाठ है।

भीषण रण-क्षेत्रों में सारा जीवन बिताया। यहाँ तो हिन्दू-जातीयता का निर्माण ही एकमात्र साध्य रहा। ऐसी दशा में भगवती भारती की उपासना करनी सचमुच ही कुतूहल-वर्द्धिनी है। और, उपासना-सी उपासना की। लक्ष्मी, काली और सरस्वती—इन तीनों महाशक्तियों की साधना, एक साथ ही, यदि किसी साधक से बनी है तो वह बुन्देल-खंड का रक्षक वीर-शार्दूल छत्रसाल है।

कवियों का जैसा-कुछ सम्मान महाराजने किया, कोई क्या करेगा। महाकवि भूषण का ही एक उदाहरण महाराज की गुण-ग्राहकता का पुष्टतम प्रमाण है। भूषण का महाराज शिवाजी के दरबार में अच्छा सम्मान था। एक बार वे शिवाजी के पौत्र साहूजी के यहाँ भलीभाँति सम्मानित हो छत्रसाल महाराज के यहाँ आये। वहाँ भी कवि का यथेष्ट सत्कार किया गया। कवि की विदाई करते समय महाराज ने उनकी पालकी का डंडा खुद अपने कन्धे पर रख लिया। भूषण यह देख कर गद्‌गद हो गये। पालकी से कूद कर कहने लगे— बस, महाराज!

राजत अखंड तेज, छाजत सुजसु बड़ो,
गाजत गयंद दिग्गजन हिय साल को।
जाहि के प्रताप सों मलीन आफताप होत,
ताप तजि दुजन करत बहु ख्याल को॥
साज सजि गज तुरी पैंदर कतार दीने
भूषन भनत, ऐसो दीन-प्रतिपाल को?
और राव राजा एक मन में न ल्याऊँ अब
साहू कों सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को॥

धन्य है ऐसी गुण-ग्राहकता! जौहरी ही जौहरी को पहचानता है।

लब्धप्रतिष्ठ हिन्दी-लेखक मिश्रबन्धुओंने अपने 'विनोद' में महाराज के संबंध में लिखा है—

"आप स्वयं भी कविता करते थे। 'राज-विनोद' और 'गीतों का संग्रह' नाम के आप के दो ग्रन्थ भी खोज में मिले हैं। आप का रचना-काल संवत् १७३० से माना जा सकता है।"

[द्वितीय भाग, ५३६-'४०]

महाराज की रचना का एक उदाहरण भी 'विनोद' में दिया गया है। ज्ञात नहीं, विनोदकारों ने क्या समझ कर उन्हें किसी भी कवि-श्रेणी में प्रतिष्ठित नहीं किया। आशा है, विनोद के संशोधित संस्करण में महाराज छत्रसाल का भी स्थान किसी सफल कवि से नीचा न रहेगा।

महाराज की रचना

महाराज छत्रसालने भक्ति, विशुद्ध शृङ्गार और नीति पर कविता की है। फिर भी प्राधान्य भक्तिविषयक रचना का ही है। राधाकृष्ण और सीताराम—इन दोनों ही पक्षों पर आपने उत्तमोत्तम पद्य लिखे हैं। यद्यपि इष्ट आप को श्रीराधाकृष्ण का था, तथापि आप राम और कृष्ण में अभेदत्व देखते थे। हनुमानजी के सम्बन्ध में भी आपने अनेक उत्कृष्ट पद्य रचे हैं। भक्तिविपयक रचनाओं में आपने सूर और तुलसी की भाँति जीव की दीनता और अधमता एवं ईश्वर की दीन-बन्धुता, पतित-

पावनता और कृपावलम्बता पर खूब ज़ोर दिया है। अपनी-बीती की भी झलक यत्रतत्र मिलती है। राज-नीति पर तो आपने बेजोड़ पद्य लिखे हैं।

'मिश्रबन्धु-विनोद' में उल्लिखित 'राज-विनोद' और 'गीतों का संग्रह' के अतिरिक्त महाराज की रचनाओं के तीन संग्रह और प्राप्त हुए हैं—(१) छत्र-विलास (२) नीति-मञ्जरी, और (३) महाराज छत्रसालजू की काव्य।

मैंने 'राज-विनोद' और 'गीतों का संग्रह' नामक ग्रन्थ नहीं देखे। सम्भव है, राज विनोद के पद्य इन तीनों संग्रहों में आ गये हों। छत्र-विलास संकलित ग्रन्थ है। जिसे चरखारी-नरेश स्वर्गीय जुझारसिंहजू देव ने, संवत् १९६९ में, अपने राजकीय प्रेस में छपाया था। ग्रन्थ के अन्त में लिखा है—

भूप-मणि-मुकुट महीपत जुझारसिंह
तासु कृत कविता निज प्रेस में छपाई है।
छत्रसाल राजेन्द्र कृत संग्रह सुयश विचार।
भूपति सिंहजुझार की छपि आज्ञा अनुसार॥

श्रीयुक्त पण्डित जगन्नाथप्रसादजी त्रिपाठी ने कविता शुद्ध की और श्रीदरयावसिंह जैवार ने कापी लिखी—ऐसा पुस्तक के अन्त में लिखा है। छत्रविलास लीथो में छपा है। अशुद्धियाँ बहुत अधिक हैं। ज्ञात नहीं, त्रिपाठीजी ने कैसा क्यों संशोधन किया। संग्रह और संशोधन में उत्तर-दायित्व के लिये बहुतही कम स्थान है। प्रेस से तो ग्रन्थ प्रकाशित हो गया, पर, न जाने क्यों, हिन्दी-जनता में वह अप्रकाशित ही रहा। दो सौ प्रतियाँ उसकी छपी थीं।

छत्रविलास में निम्नलिखित नाम के ग्रन्थ हैं—

(१) श्रीराधाकृष्ण-पचीसी, (२) कृष्णावतार के कवित्त, (३) रामावतार के कवित्त, (४) रामध्वजाष्टक, (५) हनुमान पचीसी, (६) महाराज छत्रसाल प्रति अक्षर अनन्य के प्रश्न, (७) दृष्टान्ती और फुटकर कवित्त, (८) दृष्टांती तथा राजनैतिक दोहा-समूह।
२, ३, ७ और ८ संख्यक ग्रन्थ तो निस्संदेह फुटकर पद्यों के संग्रहमात्र हैं। रहे १, ४, ५ और ६ संख्यावाले, सो उन में भी हमें इस पर सन्देह है कि उनके नाम स्वयं ग्रन्थकारने रखे या किसी अन्य सज्जनने। राधाकृष्ण-पचीसी के आदि में यह दोहा दिया गया है—

चरन सिद्धिपति के सुमिरि गो-पद-रज शिर धारि।
छत्रसाल कहि पचीसी राधाकृष्ण उचारि॥

इस में सब २९ पद्य हैं। २८वाँ कवित्त इस प्रकार प्रारंभ होता है—

विरचि पचीसी राधाकृष्ण कों रिझायौ चहौं
मति अनुरूप यह कछु कहि सुनाऊँ मैं।

अन्तिम दोहा यह है—

सम्पति सुख छत्रसाल के दम्पति राधास्याम।
पूरन तासु पचीसका अभिमत दायक काम॥

निम्नलिखित पंक्तियाँ तो निश्चय ही संग्रहकर्त्ता की लिखी हुई हैं—

"इति श्रीमन्मार्तण्डकुलावतंस निज दोर्दण्डप्रतापार्जित बुन्देलखंडमंडल श्रीमन्महाराजाधिराज राजराजेश्वर श्रीमहाराजा छत्रसालजू देव विरचिता श्री राधाकृष्ण पचीसी समाप्ता।"

ये चार प्रमाण 'राधाकृष्ण पचीसी' के संबंध में मिलते हैं। प्रथम तीन प्रमाणों में काफ़ी शिथिलता है। उनके छत्रसाल-कृत होने में मुझे संदेह है। पहला दोहा बहुत ही साधारण है। दूसरा पद्यांश भी संतोष-जनक नहीं कहा जा सकता। तीसरे प्रमाण के दोहे की दूसरी पंक्ति प्रथम पंक्ति के साथ असंबद्ध-सी है। चौथा प्रमाण तो स्पष्ट ही है। महाराज छत्रसाल, जिनका यह सिद्धांत था कि 'नामी नर होत गरुड़गामी के हेरे तें,' अपने नाम को इन विशेषणों से भूषित कभी न करते। मुझे जो हस्तलिखित 'महाराज छत्रसालजू की काव्य' नामक पुस्तक मिली है, उसके अन्तर्गत 'कृष्ण कीर्तन' में उपर्युक्त पचीसी के प्रायः सभी पद्य आ गये हैं। पर 'कृष्ण-कीर्तन' नाम के संबंध में भी ग्रन्थकार मौन है। संभव है, वह नाम भी किसी संपादकने ही रखा हो। जो हो, मैं इस निश्चय पर नहीं पहुँच सका कि 'राधाकृष्ण-पचीसी' का नाम-करण स्वयं ग्रन्थकारने किया है।

'रामध्वजाष्टक' में कुल मिला कर १२ पद्य हैं। आदि का दोहा मैं अविकल उद्धृत करता हूँ—

सुमुख पांय शुक पांय नित, वाणी के युग पाय।
छत्रसाल वंदत मुदित, रामध्वजाष्टक गाय॥

अंत में यह दोहा दिया गया है—

छत्रसाल नृप कृत भलो रामध्जाष्टक इष्ट।
ताहित नित प्रति पवनसुत हेरहि सदा सुदृष्ट॥

फिर ये पंक्तियां हैं—

"इति श्री मन्मार्त्तण्ड··················श्रीरामध्वजाष्टकं सम्पूर्णम्।"

कौन कह सकता है, इस ग्रन्थ को यह नाम ग्रन्थकारने दिया या किसी अन्यने। पर मुझे जो ग्रन्थ मिला है, उसमें इस नाम का कोई पृथक् ग्रन्थ नहीं है। इस ग्रन्थ का अधिकांश हनुमान्-विषयक पद्यों में आगया है।

'हनुमान पचीसी' में सब ३५ पद्य हैं। आदि और अंत के, क्रमशः, ये दोहे हैं—

वाणी के वन्दहुँ चरण गणपति चरण मनाय।
श्री हनुमान पचीसका छत्रसाल कहि गाय॥
श्री महवीर पचीसका भूप छता कृत नित्त।
पढ़हि ताहि श्री वायुसुत देहिं भक्ति बल वित्त॥

कहने की आवश्यकता नहीं कि ये दोहे काफ़ी शिथिल और पीछे से जोड़े हुए हैं। मेरे ग्रन्थ में 'हनुमान-पचीसी' का कोई पृथक् नाम नहीं। हनुमद्विषयक उसमें जोर चना है उसी में 'रामध्वजाष्टक' और 'हनुमान-पचीसी' के प्रायः सभी पद्य आ गये हैं।

'महाराज छत्रसाल प्रति अक्षर अनन्य के प्रश्न' यह नाम तो निस्संदेह पीछे किसी ने रख

दिया है। मुझे जो ग्रन्थ मिला है उसमें इस संग्रह का नाम 'अक्षर अनन्य के प्रश्न और तिनकौ उत्तर' मिलता है, जो समीचीन भी है। 'छत्र-विलास' के सम्बन्ध में मेरा यही वक्तव्य है।

अब, मैं उन दोनों हस्तलिखित पुस्तकों के सम्बन्ध में कुछ लिखूँगा जिनके आधार पर मैंने प्रस्तुत 'छत्रसाल-ग्रन्थावली' का सम्पादन किया है। चार-पाँच मास हुए, मुझे पन्ना राज्य का पुस्तकालय देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। हस्तलिखित पुस्तकें वहाँ कई देखने में आयीं। बख्शी हंसराज-कृत 'मेहराज-चरित' और महाराज छत्रसाल-रचित 'महाराज छत्रसालजू की काव्य' तथा 'नीति मंजरी' नामक ग्रन्थ देख कर मेरे आनन्द की सीमा न रही। इसके कुछ ही दिन बाद मेरे एक मित्रने चरखारी में मुद्रित 'छत्र-विलास' की एक प्रति मुझे दी। मैंने पन्ना-नरेश श्रद्धेय श्रीमन्महेन्द्र महाराजा साहब को ये पुस्तकें दिखाईं। श्रीमानने मुझे आज्ञा दी कि, महाराज छत्रसाल की इन अलभ्य कविताओं का सम्पादन तुरन्त कर डालो, जिससे इनका प्रकाशन भी शीघ्र हो जाय। 'श्रीछत्रसाल-स्मारक-समिति' ने इनका प्रकाशित कराना सहर्ष स्वीकार कर लिया। मैंने सम्पादन-कार्य उसी दिन से आरम्भ कर दिया। ईश्वर-कृपा से यह शुभ कार्य दो मास में ही पूरा हो गया। आज 'छत्रसाल-ग्रन्थावली' के नाम से उन पुस्तकों का सम्पादित संस्करण आप साहित्य-रसिकों के अभिमुख उपस्थित करते हुए, वास्तव में, मैं असीम आनन्द का अनुभव कर रहा हूँ।

दोनों पुस्तकें दो भिन्न-भिन्न लिपि-कर्त्ताओं द्वारा लिखी जान पड़ती हैं। 'नीति-मंजरी', खेद है, अधूरी ही मिली। उसे किसने लिखा, कब लिखा और कहाँ लिखा, यह कुछ भी स्पष्ट नहीं हो सका। आदि में केवल इतना लिखा है—

"श्री गनेसजू सदां सहाय॥ श्री सरसुतीजू॥ अथा श्री महाराज छत्रसालजू देव कृत नीति मंजरी लिष्यते॥"

इसके बाद ग्रन्थारंभ हो जाता है। ग्रन्थ के परिचय का महाराज-रचित कोई दोहा इत्यादि नहीं है। इसमें मैंने 'महाराज छत्रसालजू की काव्य' नामक दूसरी हस्तलिखित पुस्तक के फुटकर पद्यों में से कुछ नीतिविषयक कवित्त और दोहे लेकर और मिला दिये हैं।

'महाराज छत्रसालजू की काव्य' संवत् १९०७ की लिखी हुई है। लिपिकर्त्ता कोई बंशीधर कायथ हैं। लिपि-कर्त्ता कहाँ के रहनेवाले थे, इसका कोई पता नहीं। अंत में केवल इतना लिखा है—

"श्री श्री महाराज छत्रसालजू की काव्य समापितम्॥ पोथी लाला वंसीधर कायथ ने लिषी॥ संवत् १९०७॥ जो बाँचै वा सुनै ताकों जै राधेस्यामजू की॥"

इसमें 'श्रीकृष्णकीर्तन', 'अक्षर अनन्य के प्रश्न और तिन कौ उत्तर', श्री रामचन्द्रजी तथा हनुमानजी के विषय के, और कुछ फुटकर पद्य हैं। आरंभ इस प्रकार होता है—

"श्रीगनेसाय नमः॥ श्रीविहारीजू॥ श्रीजुगुलकिसोरजू। अथ श्रीमहाराज छत्रसालजू देव कृत श्रीकृष्णकीर्तन लिष्यते॥"

मैंने पद्यों का क्रम कुछ बदल दिया है। चरखारी के छत्रविलास के चार-पाँच पद्य इसमें और मिला दिये हैं। अधूरे, शिथिल और अस्पष्ट होने के कारण लगभग २० छन्द इसमें से निकाल दिये हैं। और नाम कृष्ण-कीर्तन ही रहने दिया है।

'अक्षर अनन्य के प्रश्न और तिन को उत्तर' तथा छत्रविलास के 'महाराज छत्रसाल प्रति अक्षर अनन्य के प्रश्न', इन दोनों में पाठान्तर के अतिरिक्त और कोई अंतर नहीं है। हाँ, पन्ना की प्रति में एक दोहा अधिक है और वह बड़े मार्के का है।

'श्रीकृष्ण-कीर्तन' जहाँ समाप्त हुआ है, वहाँ यह लिखा है—

"श्री महाराज छत्रसालजू देव कृत श्रीकृष्णकीर्तन संपूरनम्।" इसके आगे श्री रामचन्द्रजी के विषय के पद्य आरंभ हो जाते हैं। इन पद्यों के संग्रह को कोई नाम नहीं दिया गया है। रामचंद्रजी के संबन्ध के कुछ पद्य फुटकर संग्रह में भी पाये जाते हैं। मैंने उन्हें भी क्रमबद्ध कर दिया है। राम-विषयक इन पद्यों के संग्रह का नाम मैंने 'श्रीराम-यश-चंद्रिका' रख दिया है। इस ग्रन्थ में भी छत्रविलास के कुछ पद्यों का समावेश किया गया है।

श्रीरामचंद्रजी के विषय के पद्यों के सिलसिले में हनुमानजी के विषय की रचना शुरू हो जाती है। इस रचना को भी कोई नाम नहीं दिया गया है। छत्रविलास के 'रामध्वजाष्टक' और 'हनुमान-पचीसी' नामक ग्रन्थों के पद्य तो प्रायः यहाँ भी सब मिलते हैं, पर वे नाम नहीं हैं। हनुमद्विषयक कुछ छंद फुटकर रचनाओं में भी हैं। मैंने उन्हें एक ही स्थान पर संकलित कर दिया है। हनुमद्विषयक समस्त पद्यों के संग्रह का नाम मैंने 'हनुमद्विनय' रखा है। 'छत्र-विलास' में इस विषय के चार-पाँच पद्य अधिक हैं, पर वे बहुत ही अस्पष्ट और साधारण हैं। अतः उन्हें मैंने हनुमद्विनय में स्थान नहीं दिया।

हनुमानजी के विषय की रचना जहाँ समाप्त हुई है, वहाँ समाप्ति-सूचक कोई वाक्य नहीं है। बस, वहाँ से फुटकर पद्यों का आरंभ निम्नलिखित पंक्ति से हो जाता है—

"अथ श्री महाराज छत्रसालजू की फुटकर काव्य ॥"

इस सब के बाद मैं तो इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि महाराज छत्रसालने किसी ग्रन्थ की रचना नहीं की। उनकी सब कविताएँ फुटकर ही हैं। सच पूछो तो एक स्थान पर बैठ कर किसी ग्रन्थ-निर्माण के लिये उन्हें अवकाश ही कहाँ था ?

पाठान्तर और संशोधन

'छत्रविलास' और पन्ना की पुस्तकों में अत्यधिक पाठान्तर है। किसी-किसी पद्य में तो पृथ्वी-आकाश का पाठ-भेद मिला है, इसीसे मैंने पाठान्तर देना उचित नहीं समझा। मुझे पन्ना की पुस्तकें छत्रविलास की अपेक्षा अधिक शुद्ध प्रतीत हुई हैं। ज्ञात नहीं, 'छत्रविलास' के संग्रहकर्त्ता ने किन पुस्तकों के आधार पर संकलन और संशोधन किया। कई पद्य तो उसमें अन्य साधारण कवियों के आ गये हैं। अस्पष्टता, शिथिलता, और अशुद्धता की तो ख़ासी भरमार है। पन्ना की पुस्तकों में ये दोष नहीं हैं। छंदोभंग इन में बहुत कम है। छत्रविलास में तो यह दोष स्थान-स्थान पर मिलता है। पन्ना की पुस्तकों में संशोधन के लिये बहुत ही कम स्थान है। कहीं-कहीं पर नाममात्र का थोड़ा-सा हेर-फेर करना पड़ा है।

भाव-साम्य एवं पद्य-सादृश्य

ग्रन्थकारने कई सुकवियों के सुंदर भावों को अपनाया है। सूर, तुलसी, बिहारी, हठी आदि

के भाव यत्र-तत्र आप की रचनाओं में झलकते मिलेंगे। इस से आप की बहुज्ञता का पता चलता है। यह भाव-साम्य की बात है। मुझे पद्य-सादृश्य भी दो-एक स्थल पर देख पड़ा है, जिस पर आपत्ति उठाई जा सकती है। 'छत्रसाल-ग्रन्थावली' का एक कवित्त नीचे दिया जाता है—

सुजस्सु सो न भूषन विचार सो न मंत्री, त्यों
साहस सो सूर कहूं ज्योतिषी न पौन सो।
संयम सी औषध न, विद्या सो अटूट धन,
नेह सो न बंधु औ दया सो पुन्य कौन सो॥
कहै छत्रसाल, कहूं सील सो न जीतवान,
आलस सो बैरी नाहिं मीठो कछू नौन सो।
सोक कैसी चोट है न भक्ति कैसी ओट कहूं
राम सो न जाप और तप है न मौन सो॥

कुछ पाठान्तर के साथ यह कवित्त छत्रविलास में भी है। यही कवित्त मैंने एक सज्जन के मुख मे निम्नलिखित रूप में सुना है—

जस सो न भूषन विचार सो न मंत्री कहूं
साहस सो सूरबीर ज्योतिष लै सगुन सो।
संयम सी ओषध न विद्या सो अटूट धन
नेह ऐसो वन्धु औ दया सो पुन्य कौन सो॥
सील सो न हितुवा आलस सो न वैरी कहूं
अन्न सो न प्यारो न मीठो कछू नौन सो।
सोक ऐसी चोट है न भक्ति ऐसी ओट है
न राम ऐसो जप है न तप और मौन सो॥

इसमें पाठान्तर के अतिरिक्त रचयिता का भी नाम नहीं। अब यहाँ यह समस्या उपस्थित हो जाती कि यह कवित्त महाराज छत्रसाल का है अथवा किसी अन्य कवि का। यह कवित्त दोनों ही प्रतियों में पाया जाता है। एक संगृहकर्त्ता असावधानी कर सकता है, पर भिन्न स्थान और भिन्न काल के दो संगृहकर्त्ताओं ने कदाचित् ही एक ही पद्य के संबंध में ऐसी भूल की हो। मेरे कहने का यह तात्पर्य नहीं कि निश्चयपूर्वक उपर्युक्त पद्य महाराज छत्रसाल का ही है। संभव है, किसी अन्य कवि का हो। पर मैंने अभी हाल उसे ग्रन्थावली में, दो-दो पुस्तकों में होने के कारण, स्थान दे दिया है। कुछ पद ऐसे हैं, जो सूर-सागर और तुलसी-कृत गीतावली दोनों में ही पाये जाते हैं। वास्तव में वे किसके रचे हैं, इसका निर्णय करना आज कठिन हो गया है।

नीचे एक और कवित्त दिया जाता है—

जाके बीर एक-एक काल तें कराल हुते,
जानें गहि काल आनि पाटीतें बँधायौ है।

कुंभकर्न भ्रात जाकी धाक तें सकात लोक,
पूत इन्द्रजीत इन्द्र जीतिकैं कहायौ है ॥
कहै छत्रसाल, इन्द्र बरुन कुबेर भानु
जोरि-जोरि पानि आनि हुकुम मनायौ है ।
जौन पाप रावन के भौना में न छौना रह्यौ,
तौन पाप लोगनु खिलौना करि पायौ है ॥

इसी समस्या पर मैंने यह कवित्त सुना है—

जाही पाप इन्द्र कें सहस्र भग अंग भईं
जाही पाप चन्द्रमा कलंक आनि छायौ है ।
जाही पाप राती कौ बराती सिसुपाल भयौ,
जाही पाप कीचक कचक ठहरायौ है ॥
जाही पाप बालि कौ बधहु कियौ बनमाली,
जाही पाप दानौ हाथ माथ दै जरायौ है ।
जाही पाप रावन के न छौना बचे भौना माँझ,
ताही पाप लोगन खिलौना करि पायौ है ॥

इस कवित्त में भी रचयिताका नाम नहीं है । जबतक यह निर्णय न हो जाय कि यह कवित्त छत्रसाल से पहले का है तब तक मैं इसे ग्रन्थावली के कवित्त के आधार पर रचा हुआ ही मानूँगा ।

कविवर पद्माकर का निम्नलिखित सुप्रसिद्ध कवित्त भी महाराज छत्रसाल के एक कवित्त के आधार पर रचा हुआ प्रतीत होता है—

संपति सुमेरु की, कुबेरु की जो पावै ताहि
तुरत लुटावत विलंब उर धारै ना ।
कहै पदमाकर, सुहेम हय हाथिन के
हलके हज़ारन के बितरि विचारै ना ॥
दीनें गज बगसि महीप रघुनाथराव,
याहि गज धोखे कहूं काहूँ देइ डारै ना ।
याही डर गिरिजा गजानन कों गोइ रही,
गिरि तें गरे तें निज गोद तें उतारै ना ॥

महाराज छत्रसाल का कवित्त यह है—

दिग्गज दुचित्त, चित्त सोचत पुरंदर भे,
आजु मेरे करि कों का भिच्छुक विलसिहैं ।
देत गज-दान भूप दसरथ राज-राज,
राम-जन्म भये कौ बधावनो हुलसिहैं ॥

हाथी लै हजारन के हलके सुजाचक हूं,
आछे अलकेस मनों आयकैं सुबसिहैं।
गोय लै गनेस, गिरजा सों छत्रसाल कहै,
गज के भरम लै भिखारिनि बगसिहैं॥

निस्संदेह, पद्माकर के 'याही डर..............उतारै ना' में जो खूबी है वह 'गोय लै...
...बगसि हैं' में नहीं, पर अन्य बातें देखते हुए मुझे तो छत्रसाल का ही कवित्त ऊँचा जचता है। इस में दिग्गजों का दुचित्त होना और ऐरावत-पति पुरन्दर का चित्त में सोचना तथा याचकों का अलकेश बन जाना काव्य-कला का खासा निदर्शक है। 'महीप रघुनाथराव' और 'दसरथ राज राज' में जो अन्तर है उसे देखते हुए छत्रसाल की अत्युक्ति, अत्युक्ति नहीं रह जाती।

भाषा और छन्दों का प्रयोग

महाराज छत्रसाल की रचना ब्रजभाषा में है। बुन्देलखंडी का प्रयोग कहीं-कहीं पर किया गया है। अवधी के बहुत ही थोड़े शब्द मिलेंगे। यों तो फ़ारसी शब्द भी दो चार पद्यों में प्रयुक्त किये गये हैं। एकाध पद्य खड़ीबोली का भी पाया जाता है। पर सब मिला कर आप की भाषा ब्रज-भाषा है। जो शुद्ध और मधुर है। शब्दों की तोड़-मरोड़ बहुत कम की गयी है। किसी-किसी पद्य की भाषा तो ब्रज-भाषा के किसी भी ऊँचे कवि की भाषा से टक्कर ले जाती है।

महाराजने कवित्त ही अधिक लिखे हैं। हनुमद्विनय में विविध छन्द पाये जाते हैं। उन्हें पढ़ते हुए केशव की रामचन्द्रिका का स्मरण आ जाता है। यतिभङ्ग दोष अन्य कवियों की अपेक्षा इन्होंने बहुत कम किया है। प्रतीत होता है, इन्हें छन्दःशास्त्र का अच्छा ज्ञान था।

उपसंहार

महाराज छत्रसाल एक ऊँचे कवि थे। प्रेम और भक्ति इन की रचना में कूट-कूट कर भरी हैं। इनकी रचना में तन्मयता की अच्छी मात्रा है। इनकी दृष्टि निस्सन्देह कवि-दृष्टि थी। राज-नीति पर इन्होंने जो पद्य रचे हैं, वे आज भी हमारे पथ-प्रदर्शक कहे जा सकते हैं। काव्य-कला की ओर यद्यपि इन्होंने विशेष ध्यान नहीं दिया, तथापि उसका सर्वथा अभाव नहीं है। ब्रज-भाषा के साहित्य में महाराज छत्रसाल की रचनाएँ भी प्रेम और आदर की दृष्टि से देखी जायँगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

प्रस्तुत पुस्तक का सम्पादन मैंने बड़ी जल्दी में किया है, अतः बहुत संभव है, कि मुझ से एक नहीं अनेक भूलें हुई हों। मैंने यह लिखा है कि मैंने कहीं-कहीं पर पाठ में नाममात्र का थोड़ा-सा हेर फेर कर के पद्यों का संशोधन किया है। महाराज छत्रसाल की कविता का भला मैं मन्दमति क्या संशोधन करूँगा! संशोधन असल में लिपि-कर्त्ताओं की असावधानी का किया गया है। फिर भी मेरी यह अनधिकार चेष्टा है।

प्रयाग,
पौष शुक्ला ५, संवत १९८३, } वियोगी हरि

श्रीहरिः

छत्रसाल-ग्रन्थावली

श्रीकृष्ण-कीर्तन

दोहा

दयासिंधु, सुनिये अरज, श्रीराधे ब्रज-रानि ।
छत्रसाल, पायनि पर्‌यौ, सरन राखिये आनि ॥ १ ॥

कवित्त

पूजन कों देविन की जुरिकैं जमातें आय,
घेरि-घेरि पंथ में घटा सी घुमड़ी परैं ।
कहै छत्रसाल, संभुरानी, इन्द्ररानी, बिधि—
रानी, रमारानी मोद माँड़ि उमड़ी परैं ॥
जाकी ओर राधा की परति दृग-कोर नैंक,
सिद्धि रिद्धि ताकी ओर झूमि झुमड़ी परैं ।
ओड़ीं परैं कौन पै, बगोड़ीं एक गोड़ीं दौरि*
संपदैं निगोड़ी होड़ा-होड़ी सुमड़ी परैं ॥ २ ॥

---

* २, ३, ४, ११ और १३ संख्यावाले पद्य, जान पड़ता है, कविवर हठी कृत श्रीराधा-संबंधी कवित्तों के आधार पर रचे गये हैं ।

देव-पति-रानी, देव-रानी, नग-नाग-रानी,
दिन-मनि-रानी, चंद्र-रानी झलाझल की ।
कहै छत्रसाल, यच्छ-रानी अरु पच्छि-रानी,
गावैं अप्सरानी जासु कीरति अमल की ॥
बानी महरानी, रुद्र-रानी कर जोरि-जोरि,
चाहैं कृपा-कोर चारु लोचन-कमल की ।
ह्वैकैं परिचारिका ए परतीं पगनि आय,
करतीं टहल नित्य राधिका-महल की ॥ ३ ॥

राधा-पद-पंकज के अंकज गुनानुवाद
गावैं, सर्व साधि साधैं बहुत समाधैं हैं ।
जाकैं पट्टरानी बसु सो बसु तुम्हारे सदा,
सुनियतु जहाँ-तहाँ तुम्हैं अवराधैं हैं ॥
तेरे मुख-चन्द की चकोरी देव-गोरी सबै,
कीरति-किसोरी ओर दृष्टि इष्ट बाँधैं हैं ।
ईस सीसचन्द्र नित तुमहिं अराधैं देवि,
छत्रसाल राधा-ब्रत राधाप्रति साधैं हैं ॥ ४ ॥

राधा के सनेह-हित गेह तजि आयौं इतै,
और कहा कहौं गाय बिपिन चरायौं मैं ।
जायौ जौन जनक तौन तनिक न मान्यौ मैं,
राधा के सनेह नंदलाल हूँ कहायौं मैं ॥

राधा के सनेह मेह-नायक कौं जीत्यौ जाय,
कहै कृष्ण, 'छत्रसाल', गिरि कों उठायौं मैं ।
मोकों कहै लाख बार भाखि-भाखि साखि दै-दै
राधा बिनु, ताहि नैक भूलिहूँ न भायौं मैं ॥ ५ ॥

द्रौपदी सुदामा आदि गिनती गिनाय कहौं,
कौन-कौन दासन के दुरित दुराये ना ।
प्रनत उधारिबे कों दीनजन पारिबे कों,
कीने जे चरित्र पार चारमुख पाये ना ॥
आरही करी पै त्यों हरी पै करी गौर प्यारे !
अजामेल ध्यान कछू बहुतक ध्याये ना ।
परमकृपाल अब नन्दलाल दीनपाल !
दीन छत्रसाल पै दयाल होत काये* ना ॥ ६ ॥

पालै पाकसासनहू जाके अनुसासन कों,
जाके लोक-लोकप भँडारी राज-राज हैं ।
कहै छत्रसाल, ब्रह्म-रचित जहान-जीव,
ग्यानी गुन गावैं ध्यावैं संभु सिद्धराज हैं ॥
भानु ससि रैन-दिन करत प्रनाम जाहिं,
दंडधर देत दंड दंडिन दराज हैं ।

* 'काहे' का अपभ्रंश । बुन्देलखंडान्तर्गत खटोला का प्रयोग ।

दीन-प्रतिपालक प्रवीन दिवि-देवन में,
धरम-धुरीन सो हमारैं ब्रजराज हैं ॥ ७ ॥
'प्रनत-निवाज' कौ बिरद ब्रजराजजू कौ,
दीनों ध्रुव धाम तीनि लोक में अवाज है।
दाता के द्वार पै तौ गुजारो होत दीनन कौ,
दीननि के द्वार गयें होत कहा काज है॥
कौन-कौन कृष्ण कौ चरित्र कहि पावैं हम,
छत्रसाल कहनि ज्यौं ताँत बसु बाज है।
लाज है हमारी सब हाथ ब्रजराजजू के,
आपही है कर्नधार, आप ही जहाज है ॥ ८ ॥
ऐसे दीनबंधु छाँड़ि कौन के अधीन हौंउँ,
दीन प्रतिपालिबे की और की न गत है।
कहै छत्रसाल, है अधार निराधारन की,
किय निरधार यह चारि बेद-मत है॥
बिरद समोद, बोध-मंगल-करन अति,
सरन-समर्थ, अपराधनि छमत है।
जाकी तींनि देव तीनि सक्तिनि में सक्ति सदा,
मेरी हर भाँति मात राधे-हाथ पत है ॥ ९ ॥
तुम घनस्याम हम जाचक मयूर मत्त,
तुम सुचि स्वाति हम चातक तुह्मारे हैं।

चारु चंद्र प्यारे तुम लोचन चकोर मोर,
तुम जग तारे हम छतारे उचारे हैं ॥
छत्रसाल, मीत मित्रजा* के तुम ब्रजराज !
हमहूँ कलिंदजा के कूल पै पुकारे हैं।
तुम गिरि-धारी हम कृष्ण-व्रत-धारी, तुम,
दनुज प्रहारे हम यवन प्रहारे हैं ॥ १० ॥

कमल गुलाब आब अमल अमोल छबि,
कोमल नवल नवनीत सों अनंदौं मैं।
कहै छत्रसाल, नख-नखत-कलान-पति
हौंहुँ लवलीन, भव-फंद में न फन्दौं मैं ॥
भावगम्य ध्यावत मुनीस सुर सिद्ध सबै,
जिनके सुबसु चारि बेद-भेद छन्दौं मैं।
अति सुखदाय दीनजन के सहाय पाय
प्यारी राधिका के कर जोरि-जोरि बदौं मैं ॥ ११ ॥

एक बार नागराज बूड़त बचाय लियौ,
धाये उठि आसु अग्र चक्र कर धारो है।
द्रौपदी के लाज-काज बसन बढ़ायौ, तासु
अंत न मिल्यौ है, मूढ़ दुस्सासन हारो है ॥

---

* यमुना।

कहै छत्रसाल, सखा पारथ कौ सारथि ह्वै,
मेट्यौ प्रन आपु गंग-नंद कों प्रचारो है ।
ब्रज कौ दुलारो, नंद-जसुदा कौ प्यारो बारो,
मोर-पच्छवारो सोई मोर पच्छवारो है ॥ १२ ॥

भाग की सुहाग औ अभागनि की भागरूप !
पीकौ अनुराग भूरि भावनि नितै देहि ।
कहै छत्रसाल, बुद्धि-बिबिध-बिधानवारी,
बीरता पुनीत औ सुधीरता जितै देहि ॥
अदया, अधीनता, अयानता, अयोग, रोग,
करम, कुयोग जेते सबहीं बितै देहि ।
दयासिंधु ! मेरी ओर करिकैं कृपा की कोर
राधे ! ब्रजरानी ! आजु तनिक चितै देहि ॥ १३ ॥

मुकुलित मंजु कंजु कोमल, त्रिलोक-बन्द्य,
मंगल-करन जे हरन भव-बाधा के ।
मौलिचन्द धारैं, धारैं आसन-सरोज जिन्हैं,
हेरि-हेरि हारे मुनि बेदहूँ अगाधा के ॥
कहै छत्रसाल, प्रनतारत-सहायक जे,
दायक समर्थ सदा रिद्धि-सिद्धि-साधा के ।
मित्र औ अमित्रन के चित्त में बिचारि चारु
बन्दौ पद-पदुम पवित्र कृष्ण-राधा के ॥ १४ ॥

मार्‌यौ है अघासुरै, बिदार्‌यौ कलि-कंस केसी,
इन्द्र-मद गार्‌यौ गिरि-राज नख धारो है ।
कहै छत्तसाल, अष्ट-दसहू पुराननि में,
चारि बेद-गाननि में बिरद उचारो है ॥
दीनजन-पाल, द्याल, नन्दलाल, लाल ! मेरे
कटिहैं कलेस बड़ो सरन तुम्हारो है ।
अग-जग हार्‌यौ, कहि काहू नाहिं पायौ पार,
सोई मो अधार जानैं गज निनवारो है ॥ १५ ॥

द्रुपद-सुता की लाज बसन बढ़ाय राखी,
गज की पुकार पच्छि-राज तजि धाये हौ ।
घंटा बाँधि भारही के अंडनि बचायौ नाथ,
भारत में पारथ के सारथि कहाये हौ ॥
खंभ तें निकसि प्रहलाद की प्रतिज्ञा राखी,
छत्तसाल, दीन-पाल बेदनि में गाये हौ ।
मेरी बेर देर क्यों कृपा-निधान सत्य-संध !
दीननि पै द्याल तौ सदाहीं होत आये हौ ॥ १६ ॥

सुदामा तन हेरे तौ रङ्कहूतें राव कीनों,
बिदुर तन हेरे तौ राजा कियौ चेरे तें ।
कूबरो तन हेरे तो सुन्दर स्वरूप दियौ,
द्रौपदी तन हेरे तौ चीर बढ्यौ टेरें तें ॥

कहै छत्रसाल, प्रहलाद की प्रतिज्ञा राखी,
हिर्नाकुस मार्‌यौ नैक नजर के फेरे तें ।
एरे अभिमानी नर ! ज्ञानी भए कहा भयौ ?
नामी नर होत गरुड़-गामी के हेरे तें* ॥ १७ ॥

सुमिरत क्यों न घटरूँधन में मूढ़मति !
सुन्दरजू, सत्यजू, सहायकजू, स्यामजू ।
अच्युतजू, आदिजू, अपारजू, अनूपमजू,
अच्छरजू, अजजू, अनंतजू, अकामजू ॥
कहै छत्रसाल, नरसिंहजू, निरंजनजू,
नरजू, नरोत्तमजू, नित्यजू, निधामजू ।
राघवजू, राजजू, रणीजू, रघुनंदनजू,
रसजू, रमेसजू, रघूत्तमजू, रामजू ॥ १८ ॥

मानी कहा हार तारि तोम तम-चारिन कों,
अधम उधारि कंस केसी के पछारे की ।
द्रौपदी के बसन बढ़ायबे में हार मानी,
कैधौं मर्दि मल्ल गज-गंजन दँतारे की ॥

---

* महाराज छत्रसाल के एक अहम्मानी समकालीन सज्जन से उनका यश और प्रताप सहन न हो सका । छत्रसाल को कहला भेजा कि, "तुम स्वयं ही अपने घर में राजा बन बैठे हो ! तुम्हें हम लोग तो राजा मानते नहीं । हमारी दृष्टि में तो तुम वही मामूली जागीरदार हो ।" कहते हैं, इसी ताने के उत्तर में यह पद्य रचा गया था ।

कैधौं बका बकी अघ सकट सों मानी हार,
कैधौं है हार अजौं गोतम-तिय-तारे की ।
खेवत तूँ नाहिँ कहा जानिकैं कन्हैया प्यारे !
जक्त के खिवैया ! नैया भूपति छतारे* की ॥ १९ ॥

बदत पुरान जाकों, बंदत जहान जाकों,
कीरति-सुता कों बृषभानुजा कों गाऊँ मैं ।
दीनजन-पालिनी कों, नन्दलाल-लालिनी कों,
रहस-बिलासिनी कों हिये में बसाऊँ मैं ॥
जाके बसु लाल अहैं, लाल-बसु तीनि लोक,
तीनि लोक ओक, ताके चरन मनाऊँ मैं ।
छत्रसाल जाँचियौ हमेस श्रीब्रजेसुरी सों,
जनम-जनम ब्रज-कुञ्ज-रज पाऊँ मैं ॥ २० ॥

सुभट-सिरोमनि है जाकौ नाम साँचो सुन्यौ,
गुन्यौ है, आय जाकी सरन में न डर है ।
जानैं खल बिप्र गीध गजहू से दिये तारि,
बिरद उदार जासु सोई पच्छ-कर है ॥
कहै छत्रसाल, नंदलाल कौ भरोसो भूरि,
दूरि करि कुमति सुमति उर धर है ।

* छत्रसाल ।

मारे खल, जक्त तें उतारे जन पार जानैं,
जसु बिसतारे सो हमारैं इष्ट वर है ॥ २१ ॥

नंद-जसुदा कौ नंद नंदन न काकों देतु,
हेतु बसुधा कौ, कंस केसी कों कराल भो ।
कारन लये तें होत कारन करोरि भाँति,
नाम मच्छ, कच्छ, कोल, कपिल, मराल भो ॥
पर्सुराम, राम, कृष्ण, वेदव्यास, नरहरी,
करी कौ निवाज, देव-काज कों कृपाल भो ।
सरब-समर्थ सरि कासों करौं अर्थ लाय,
ताही के चरन की सरन छत्रसाल भो ॥ २२ ॥

सुदामै रंक राज दै, बिभीषन कों लङ्क दै,
ध्रुव कों अटल पद दैकैं फेरि लैहौ, जू ?
कहै छत्रसाल, जाहिँ राख्यौ निज सेवा काज,
ताहिँ द्वार-द्वार फेरि कैसें जान दैहौ, जू ?
नेति-नेति गावैं बेद, जथामति गावत हौं,
आन-गुन गायबे कों कौन भाँति सैहो,* जू ?
सबही कों देत हौ औ सबही की सुध लेत,
मेरी बार देत कहा कान मूँदि रैहौ,* जू ॥ २३ ॥

* सहि हौ और रहि हौ; बुंदेलखण्डान्तर्गत खटोला के प्रयोग ।

कृष्ण कहैं, राधेजू ! तिहारे संग अंगनि में,
मृग, मृगराज, कंज फूलित मयंक में ।
हंस, कीर, कोकिल, कपोत, पन्नगी, पिनाक,
माख तजि, छत्रसाल, बिहरैं निसंक में ॥
स्यामघन सुंदर तें काम-सुंदरी तें यह,
तेरी प्रभा कोटि दामिनी की भाँति नंक में ।
सुनि ब्रज-बाला नंदलाला के रसीले बोल,
राधा कों सुनावैं औ मनावैं भरि अङ्क में ॥ २४ ॥

स्यामा-स्याम-मई भई मही हमैं जानि परी,
आनि परी कंस कों करालता की कठनई ।
देवी देव दिवि में दमामैं दैहिँ तबहीं तें,
नंदलाल जबहीं तें कियौ बेनु-पठनई ॥
असुर सभीते भये, देव रन-जीते भये,
छत्रसाल, खेलहि में खूँदा सठ-सठनई ।
पै के रदन जानैं पूतना कौ कदन कियौ,
मेरे उर-सदन बसै ताही की अठनई ॥ २५ ॥

जौलौं जियौ तौलौं सिसुपाल सत गारीं दईं,
गारी के प्रभाव सुरलोक कों सिधारो है ।
कहै छत्रसाल, गात भृगुनैं हनी है लात,
मौन मुख साधि अङ्क उर बिच धारो है ॥

गुरु के सुगेह में सुदामा जो भुलायौ बन,
तौन मन माहिँ अपराध ना बिचारो है ।
हौं हूँ मतिमंद, नंद-नंदन ! सरन तेरे,
साँचो, कृपासिंधु ! सुनि बिरद तिहारो है ॥ २६ ॥

भारत में पारथ कौ हाँक्यौ रथ सारथि ह्वै,
स्वारथि अजातरिपु दीनी जीत रन की ।
कहै छत्रसाल, उग्रसेन छत्रधारी कियौ,
बिपत बिदारी है सुदामा-से कृपन की ॥
तीषन बिभीषन की भीषन हरी है ताप,
दीनी, नाथ ! साहिबी सुकंठहिँ बिपन्न की ।
अंतर के जामी ! खग-नाथ के सुगामी ! मोहिँ,
नामी कियौ, स्वामी ! तौ निबाहौ लाज पन की ॥ २७ ॥

सवैया

गोद में मोद सों लैकैं ललै, छत्रसाल, बलायें लईं बहुतेरी ।
प्रेम बढ़ाय, हियो हुलसाय, ललै ललचाय, न भौंह तरेरी ॥
पापिन ! पाछैं कहा समुझी, ब्रजबासिन की जिय-जीवन ए, री।
कान्हर कों बिष देति अरी ! कसकी छतिया न, कसाइन ! तेरी ॥ २८ ॥

कवित्त

आई पूत-जन्म धूत कंस की पठाई बका,
देखी सब लोगनि सुयोगनि बिसेखिये ।

ईछन-कटाछनि सों उमँगि-उमँगि जाति,
भाँति-भाँति चंद-मुख-हास अवरेखिये ॥
कहै छत्रसाल, छद्म छाजिकैं छबीली आई,
नन्द-सुठि-छौना कौ खिलौना बनि पेखिये ।
मायाधीस ईस पै सो कंस-बगसीस लाई,
असुर-खलाई की भलाई कहाँ लेखिये ॥ २६ ॥

कुंदन की भूमि, कोट काँगुरे सुकंचन के,
द्वार-द्वार देहरी पै बिद्रुम सुदेस के ।
राजत पिरोजा के किवार, खंभ मानिक के,
हीरन सों छाजे छज्जा पन्ना छबि बेस के ॥
जटित जवाहरनि झरोखे बने चोखे तहाँ,
ऐसे मनि-कोष नाहिँ कोष में धनेस के ।
उन्नत पुरंदर के मंदिर तें, छत्रसाल,
सुंदर तें सुंदर हैं मंदिर ब्रजेस के ॥ ३० ॥

सवैया

जल-जोर महा घन-घोर-घटा, ब्रज ऊपर कोप सची-वर कौ ।
कहि भूप छता, सब गोपिय गोप लखैं मुख श्रीमुरली-धर कौ ॥
कर तें धरियौ धरनी-धर कों, धरक्यौ न हियौ धरनी-धर कौ ।
करि के कर तें कर कंज लियौ, कर सोभित यों करुनाकर कौ ॥ ३१ ॥

कवित्त

देखौ री देखौ, इन कूलनि पर भूमैं भौंर,
उड़ैं दौरि-दौरि डार-डार रस चरिकैं।
गावत हैं गूँजि-गूँजि गुननि गुविंदजू के,
मुदित मलिंद रस भाव भूरि भरिकैं॥
छत्रसाल, कुंजनि में कलित कदंब फूले,
तरुन तमाल-राजि राजति छहरिकैं।
मोहन बिलोकैं, ते बिलोकैं मन-मोहन कों,
स्वर्ग के सिहात तरु आपु कों निदरिकैं॥ ३२॥

गामी खग-नाथ के, अनाथनि के नाथ तुम,
नामी तुव कीरति सुबेदनि बिचारी है।
कहै छत्रसाल, उग्रसेन कों दियौ है राज,
कंस-कृत ब्रज की दराज भय टारी है॥
द्रुपद-सुता की पत पतिन समेत राखी,
बिपत गयन्द की निबेरिकैं निबारी है।
दीन-दुख-हारी श्रीबिहारीजू ! बिसेखि सुनौ,
दारिद हमारो का सुदामातेंहु भारी है॥ ३३॥

दीनबंधु, दीनानाथ ! दीन की पुकार सुनौ,
लागिये गुहार, अब झेल मति कीजिये।

कहै छत्रसाल, जैसें द्रौपदी की राखी लाज,
तैसें, नाथ ! कान दै हमारी सुनि लीजिये ॥
दान-दया-सागर उजागर त्रिदेवनि में,
निज जन जानि, निज मानि अब रीजिये† ।
कठिन कराल कलिकाल माहिँ, महाराज !
लाज रही आवै सोइ आज करि दीजिये ॥ ३४ ॥

कैसो रमनीक नीक लागतु है बृन्दाबन,
सरद सुहाई रितु आई छिति भाई है ।
लपटि रही हैं द्रुम-बेलीं मंजु हेलीं सम,
प्रफुल प्रसून दून-दून छबि छाई है ॥
कहै छत्रसाल, छोनी छाजति छबीली छटा,
तरल तरंग लेति रम्य रवि-जाई है ।
राधिका पियारा संग कुंजनि में रंग-केलि
करत, जुन्हाई जोय, नंद कौ कन्हाई है ॥ ३५ ॥

स्याम स्याम-रंग एक, ग्वाल ग्वालिनी अनेक,
गोद लै गुलाल लाल घालैं मुरि-मुरिकैं ।
बोलत धमार मंजु फाग कौ फबीलो राग,
स्यामा बनी स्याम, स्याम स्यामा नेह-घुरिकैं ॥

† रीझिये ।

कहै छत्रसाल, ऐसो चूकिये न दाँव आजु,
कीजै अनुराग-फाग वाहीं ठौर जुरिकैं ।
रूप-रस-रंग की हिलोरनि में बोरौ अंग,
जोरौ नव नेह लाल-रंग में हिलुरिकैं ॥ ३६ ॥

जुद्ध-बल-सिंधु जरासंध कौ सँहार कीनो,
छोरे नृप बंध तें प्रबंध बंध साखियौ ।
कहै छत्रसाल, अघ-ग्रास तें बचाये ग्वाल,
ताकौ जस-जाल चारि बेदनि में भाखियौ ॥
पीन दल कौरव तें पांडव जिताये दीन,
जानिकैं अधीन दीन-बंधुता पराखियौ ।
साँवरे सलोने महाराज ब्रजराज ! अब,
रंच रुख रावरो हमारी ओर राखियौ ॥ ३७ ॥

कुंडलिया

पाये नंद सुनंद नव, ब्रह्म सच्चिदानंद ।
सिद्धि सुबसु निधि नंद गृह सुबसु भवन सानन्द ॥
सुबसु भवन सानन्द, नित्यप्रति मंगल भारी ।
छत्रसाल, अभिराम स्याम-छबि पै बलिहारी ॥
देव पितर कुल-देव तुष्ट, सब के मन भाये ।
धन्य जसोदा नंद, नंद जिन ऐसे पाये ॥ ३८ ॥

कवित्त

भूलत हौ हमैं, हम भूलत न नैक तुम्हैं,
भूलत हौ, नंदलाल! आठों जाम मन में ।
कोक कोकनद सों, ज्यों चकोर हिमकर सों,
जलद सों मयूर ज्यों मीन पीन बन में ॥
जानि परै मोहन, बिछोह एक ओर ही कौ
छत्रसाल, जी कौ मतो आनँद मगन में ।
लगन लगाय देखौ, भ्रमहिँ बिहाय देखौ,
आपुहीं लखाय जासु बासु ही-सदनमें ॥ ३९ ॥

उपमा न आन कहूँ दुरद-उबारिबे की,
दारिद बिदारिबो सुधारिबो सुदामा कौ ।
जवन-प्रहारिबो जगाय मुचकुंद ब्याज,
सुर-तरु ल्यायबो लड़ाबो सत्यभामा कौ ॥
सबरी कौ केवट कौ बिदुर कौ मान राख्यौ,
कीनो है अकाज क्रूर केसी कंस मामा कौ ।
लोक-बेद-रीति तें नियारी सब रीति जाकी,
छत्रसाल कें अधार वाही स्याम-स्यामा कौ ॥ ४० ॥

भाखियौ, जू! राधाकृष्ण, राधाकृष्ण, राधाकृष्ण,
राखियौ, जू! राधाकृष्ण, राधाकृष्ण मन में ।

चाखियौ, जू ! चखनि चारु रूप माधुर्यताई,
रुचि सुर बाँसुरीं के बसाव कानन में ॥
मान तजि मानि मेरी सीख नीकी, छत्रसाल,
देख्यौ नाहिँ ऐसो रूप रति में मदन में ।
बगरि बसंत सोहै कूलनि कलिंदिनी के,
क्रीड़त किसोर दोऊ मंजु बृन्दाबन में ॥ ४१ ॥

जुगलकिसोर चंद्र-बिंबहिँ बिलोकि ठाढ़े
तीर जमुना के, नीर नीरज हिलोरिकैं ।
कारन कहा है तौन बूझैं राधा माधव सें,
सौंह दै, दै नैन-सैन, जुग्म कर जोरिकैं ॥
छत्रसाल, स्वामिनी के बैन सुनि बोले स्याम,
तेरो मुख-ससि ससि निरखि निहोरिकैं ।
मेरो गुरु चंद्र, मोसें कहैं ब्रज-चंद्र लोग,
तेरो मुख-चंद्र तौन कारन चकोरि कैं ॥ ४२ ॥

सवैया

पूजन औ अरचा न करी हरि की तन तें, मन में न अराधो ।
आव रु भाव भयौ नहिं भूलि, लियौ न कबौं मुख नामहुँ आधो ॥
राखहु लाज, गरीब-निवाज ! करै छत्रसाल बिनै जग-दाधो ।
औगुन कोटि भरे, गुन एक न, तारहु पार उतारहु माधो ॥ ४३ ॥

कवित्त

बाजी फेरि बाँसुरी अनेक सुर-राग-भरी,
'नंदलाल बैर पर्यौ' घैर घर-घर मैं।
नाद करि ननद बिबाद करि मोसों कहै,
काहे कों परी, भाभी! बहुत भर-भर मैं॥
काज करि आपुनो, बिरानो कहा तोकों काज?
कहा लाज डारैगी, बताव, मति सरमैं।
कहूँ लाज काज की, सो ब्याज, छत्रसाल कहै,
और कों सिखावै करै आपु सोई करमैं॥ ४४॥

जब-जब बाजति है बैरिन हमारी बेनु,
भूलैं खान-पान सुनि वाकी बिष-तान कों।
क्यों न कहैं वाकों हम सौत है हमारी, करै
हमकों दिखाय लाल-अधरामी-पान कों॥
मान लीजौ ढाँपि, छत्रसाल, प्रतिपाल कीजौ,
रीझौ नंदलाल, दीजौ जान कुल-कान कों।
आँखि दाजौ लगन, अजान मुरि जान दीजौ,
पान दीजौ काननि, बतान दीजौ आन कों॥ ४५॥

आयौ रितुराज साजि साज ब्रजराज-काज,
ललित लतान की बितान-छबि छाई है।

भौंर कीर कोकिला कलापी प्रतिहार चारु,
सौरभ-समीर-बीर धीरता जनाई है ॥
छत्रसाल, राजति रजायस, श्री राग-रंग,
तरुन तमाल फूले, भूले दीनताई है ।
स्यामा अरु स्याम प्रीति-रीति सों मिले हैं आनि,
जानि बृषभानु नंदबाबा की दुहाई है ॥ ४६ ॥

सवैया

न हौं गज, गीध, मुनी-तिय नाहिंनै, नाहिंनै सौरनी गौरनी जानौ ।
न हौं त्रिसिरा, खर, दूषन हौं न, बिराध, कबंध, मदान्ध न मानौ ॥
न हौं गनिका, न सुकेतु-सुता, कहि भूप छता, प्रभुता पहिचानौ ।
न हौं तरु-ताल, न बालि बली, तुम तें नहिँ पार परौं, तुम छानौ ॥४७॥
और चरेरू पखेरू समान पियैं सब पानि सो जीवन जानी ।
पीवैं अघाय अन्हाय, छता, कहि जीवन-दानि सदा सुख मानी ॥
चातक पै घनस्याम-भरोसें रहै मुख सूखि तृषा सरसानी ।
जाँचत औरनि तें सकुचै, मरि जाय न माँगहि और पै पानी ॥४८॥
ग्राह गयन्द लरे, छत्रसाल, भिरे जल-अंतर, ऊधम माँचो ।
हारि परयौ, हहरयौ गज, कृष्ण कौ नाम लियौ तबहाँ प्रन खाँचो ॥
साँकरे में सुध लीजतु नाहिँ तौ प्रान पयान करैं, प्रभु ! पाँचो ।
पायनि धायबो त्यौं अपनायबो, आयबो तेरो बचायबो साँचो ॥४९॥

कवित्त

सहज दयाल, खल-घालक, गुपाल लाल,
वेद-हद्द-पालक, कृपाल द्विज गैया के ।
मोहन मुकुन्द, मधु-सूदन, मुरारि, माधो,
बिस्वपति, श्रीपति, रखैया रंक-रैया के ॥
कहै छत्रसाल, नंदराय के दुलारे बारे,
नैननि के तारे, प्यारे जसुमति मैया के ।
करुना-निधान कृष्ण, केसव अनेक नाम,
अगति की गति घटरूँधन समैया के ॥ ५० ॥

को हौ जू, आये तुम कहाँ तें, कौन पंथ जात,
कहौ तौ कहौ, तुम्हैं चेला कौन गुरु करे ?
जानैं बिना नाम के निकाम तें निकाम भये,
मूड़ कों मुड़ाय जानि-बूझिकैं कुवा परे ॥
मातु पितु भाई बंधु कुटुँब कबीला छाँड़ि,
सुन्दर बसन त्यागि बृथा धूरि में भरे ।
कहै छत्रसाल, कान्ह ध्यान में न आये जोपै,
भरम गमाय धूनी ढोय-ढोयकैं मरे ॥ ५१ ॥

यारी करौ, यारो ! गिरिधारीजू के पायनि सों
मन बच काय, ए रसायन सुभक्त की ।

दैनवारी नित्य की, अनित्य हरि लैनवारी,
सरन असरन की, शक्ति है अशक्त की ॥
ध्रूनैं, प्रहलाद, अंबराष औ करीनैं करा,
याही के साधन तें सधै है प्रीति जक्त की ।
जानिये न वक्त औ कुवक्त की प्रभू की शक्ति,
कौन भाँति, छत्रसाल, भक्त औ अभक्त की ॥ ५२ ॥

बैठे भट भीष्म कर्ण पारथ से सभा बीच,
नीति औ अनीति दुष्ट नैकहूँ गनै नहीँ ।
साधु सुचि नारी-मान-खंडिबे खरो है खल,
कृष्ण कों पुकारी, फेरि कृष्ण क्यों सुनै नहीं ॥
कहै छत्रसाल, दियौ बसन बढ़ाय स्याम,
प्रभु-प्रभुताई आवै अंधज-मनै नहीं ।
द्रौपदी की दीनता, दयालुता दयानिधि की,
दुष्टता दुसासन की कहति बनै नहीं ॥ ५३ ॥

बिधि-करतब्यता की करामात जेती, तेती
सब ब्रजराजजू के हाथ सुनियतु हैं ।
हाथ ब्रजराजजू कौ भक्ति के अधीन सुन्यौ,
भक्ति नित सत्य अधीन गुनियतु हैं ॥
धर्म के अधीन सत्य, धर्म कर्म के अधीन,
कर्मबस, छत्रसाल, बयौ लुनियतु हैं ।

सुनत-सुनावत में, लोक-कहनावत में,
जैसो रखवार तैसो साँचो चुनियतु हैं ॥ ५४ ॥

चरन-सरोज-प्रीति दैहौ कै न दैहौ अब,
कैहौ कै न कैहौ कछू आपुनो कहायकैं ?
कहै छतूसाल, दोष जोपै चित्त दैहौ, प्रभू !
तौ न पार पैहौ चार जुगलौं गनायकैं ॥
लैहौ जन जानि तौ बचैहौ जग-जालनि तें,
कैधौं अलसैहौ दैहौ बिरद बहायकैं ।
जानियैं कितै हौ, नाथ ! जितहीं-तितै हौ, बैस
बैसहीं बितैहौ, कै चितैहौ चित्त लायकैं ॥ ५५ ॥

छप्पय

कृष्ण, सौरि, रुक्मिनी-रमन, राधावर, गिरिधरि ।
दामोदर, ब्रजचंद, देवकी-नंद, स्याम, हरि ॥
कंसाराति, गुपाल, नंदनंदन, सुबेनु-धर ।
बासुदेव, सकटारि, बका-केसी-अघारि, वर ॥
मोहन, मुकुन्द, गोबिन्द जय, धेनुकारि, गोपी-रमन !
शिशुपाल-मल्ल-मर्दन, प्रभो ! छत्रसाल के अघ-दमन ॥ ५६ ॥

कवित्त

रास-महि-मंडल-अखंड-रस-रासि-भास,
भासकर-जा के तीर-तीर सुख-साधा के ।

रोज-रोज निरखि सरोज-सुत आय-आय,
गावै गुनि बेद-भेद चरित अगाधा के ॥
कहै छत्रसाल, प्रतिपाल बसुधा कौ करैं,
लज्जित मराल देखि चलित अबाधा के ।
मित्र बल-बीर के, सुध्यान-चित्र भक्तनि के,
बन्दौं पद-पदुम बिचित्र चारु राधा के ॥ ५७ ॥

जाकौ बल धारिकैं प्रवीन दीन पांडवनि
उद्धत उदंड जीति लीनो कुरु-दलु है ।
धारा-धर सहित धरा पै गोप-गोपिननैं,
जाके बल कियौ देव-राज कों अबलु है ॥
अम्बरीष आदि, कहौं कहाँलौं गुनानुवाद,
जाके बल ध्रुव-राजु आजुलौं अटलु है ।
निपट अधीर छत्रसाल कों सुआठों जाम
वाही घनस्याम-पाद-पंकज कौ बलु है ॥ ५८ ॥

भूलि जिनि जैयौ हमैं द्वारिका कौ राज पाय,
एजू प्राननाथ ! कहूँ राजसी कहल में ।
प्रीति लरकाई की, प्रतीति गोपी ग्वालन की,
जीति मघवाहिँ गिरि-राज लै सहल में ॥
रास-रमनी कों, धरनी कों रास-मंडल की,
भूलियौ न नंदै, नंदरानी कों अहल में ।

जाहु, चिरराज करौ, महाराज ! छत्रसालै
राखियौ, जू ! पास खास महल-टहल में ॥ ५९ ॥

मानिकैं हुकुम जासु भानु तम-नासु करै,
चंद्रमा प्रकासु करै नखत दराज कौ ।
कहै छत्रसाल, राज-राज है भँडारी जासु,
जाकी कृपा-कोर राज राजै सुर-राज कौ ॥
जुग्म कर जोरि-जोरि हाजिर त्रिदेव रहैं,
देव परिचार गहैं जाके ग्रह-काज कौ ।
नर की उदारता में कौन है सुधार, हौं तौ
मनसबदार सरदार ब्रज-राज कौ* ॥ ६० ॥

याकौ बंस क्रूर है, कठोर, बिना सार हियौ,
बंसीं बनि आई, माई ! कर्म का करावैगी !
कहै छत्रसाल, अबै आगम बिचारि करौ,
नतरु अगारूँ ब्रजै आफत अरावैगी ॥
लागी मुँह स्याम के, न जानै, कहा कौन दिन
दैहै भरि कान, सौति जियरा जरावैगी ।
बंस निज आई जारि जीति जग एकछत्र,
आजु मनभाई करि गोपिन हरावैगी ॥ ६१ ॥

* भूमिका देखिये ।

तीर पै कलिंदिनी के लेत है हिलोरैं नीर,
खचित अमंद फंद चारु चंदिनी के हैं।
फूले फूल मंजु कंजु, पुलिंन प्रकास फैल्यौ,
मालती-मवास मत्त मधुप रमी के हैं॥
दौरे-दौरे फिरैं गोप चोप करि, छत्रसाल,
करिकैं गुपाल नंदलाल बसु नीके हैं।
इनहीं कौ नाम जग-जीवन-अमी है, एई
जीवन हमारी बृषभानु-नंदिनी के हैं॥ ६२॥

राधा कहौ कृष्ण कहौ, स्यामा कहौ स्याम कहौ,
ध्यान धरि उमँगि सनेह भरि हियरे।
चंद्रिका, मयूर-पच्छ स्वच्छ, मनि-माल लाल,
गुंजमाल, मंजुल दुकूल नील पियरे॥
गहब गुलाबहूँ तें अधिक सुआबदार,
कुसुम-हिसाबदार उपमा न नियरे।
छत्रसाल, कीरति-सुता के नंदलालजू के
पेखि-पेखि पाय तू सिराय क्यों न जियरे॥ ६३॥

बिरद बिलन्द दीनबन्द* नन्द-नन्दजू कौ
छंद चारि कहत हैं पुरारि साखि दैकैं।

* दीनबंधु।

सम्भु कहत, हौं तौ हौं सरल सुभाववारो,
गरल पिवायौ, छत्रसाल, दुख बितैकैं ॥
फेरि करि कृपा बृकासुर तें बचायौ मोहिं,
मोहिनी-सुरूप धारि मोह्यौ चित चितैकैं ।
कौन-कौन कहौं वाकी, कहत बनै न कछू,
सुन्यौं गर्व-हारी पियै गर्व गुरु रितैकैं ॥ ६४ ॥

ओढ़िबे कौं कंथा औ रमायबे कौं भस्म, पैन्हि
काननि में मुद्रा, टोप सीस पै लगावैंगी ।
हाथ लै कमंडली सुमंडली रचैंगी भली,
छत्रसाल, धारि जोग सिङ्गीहू बजावैंगी ॥
कूबरी कों सिद्धि दैकैं सुन्दरी प्रसिद्ध कीनी,
वाही के मसान बैठि वाही कों जगावैंगी ।
हम तब सुख पावैंगी जब सुध पावैंगी,
सौति के मरे की, ऊधौ ! माला हू फिरावैंगी* ॥ ६५ ॥

सवैया

छान करौ, गुनमान सबै मिलि, मान बिहाय करौ चतुराई ।
भूप छता कहै, लेहु मता करि जो लिखि साह हमैं पहुँचाई† ॥

---

* इस पद्य से मिलते-जुलते अन्य कई कवियों के पद्य प्रचुरता से मिलते हैं। मुझे इस पद्य के महाराज छत्रसाल-कृत होने में संदेह भी है ।

† ज्ञात नहीं, शाह ने किस कारण यह पहेली लिख भेजी थी। हम उनके बड़े कृतज्ञ होंगे जो इस प्रसंग को स्पष्ट कर देंगे ।

कारन कौन कहौ सुबिचारि, गहौ नहिं मौन, जू, होउ सहाई।
चोर उजागर साहु भये, कब चोरनैं साहुकों चोरि लगाई ॥६६॥
माखन-चोर सुनन्द-लला घुसि ग्वालिनि-गेह घनी दधि खाई।
आय गई जबहीं वह ग्वालिनि धाय धर्‌यौ तब बेगि कन्हाई॥
लै जसुदा ढिग ठाढ़ कियौ, वहि बाम कौ कन्त बन्यौ बलभाई।
चोर उजागर साहु भये इमि, चोरनैं साहु कों चोरि लगाई ॥६७॥

कवित्त

केती मृगनैनि मृगी घूमति अधीर, बीर !
याही ब्रज-कानन में सोर खोर-खोर है।
खोजत फिरैहै को बचैहै, क्यों बचैंगी बाल,
खेलैहै अहेर आय नन्द कौ किसोर है॥
कहै छत्रसाल, वाकौ रूप लखि अङ्ग-अङ्ग,
रङ्ग भरि जात, कुल-कानि आनि तोर है।
हानि होत मान की सुबाँसुरी सुने तें नैक,
तान भई तीर औ कमान भई पोर है ॥ ६८ ॥

परम प्रकास कौ निवास नर-देह, ताहि
खेह कस डारत निकाम काम करिकैँ।
स्वान गज काग खर सूकर प्रतीक करि
भक्ति बिन चाम-पुञ्ज सब कौ निदरिकैँ॥

भारी भय भञ्जि ब्रज राख्यौ गिरि धारि जिन,
ताहि तू मनाय, रे ! मनाय पाय परि कै ।
प्रेम-भाव भरिकैँ तौ बिहाय बुरी तकैं तू,
छत्रसाल, दास भयौ चाहै जो निडरिकैँ ॥ ६९ ॥

ग्राहनैं गजब करि गज कों ज्यों ग्रस्यौ आय,
छूटत छुड़ायौ नाहिँ, गयौ हारि बल तें ।
लोप भयौ कोप कौ कलाप, ओप चोप गयौ,
करिहैं पयान प्रान आजु याहि पल तें ॥
कहै छत्रसाल, करी कर लै कमल ध्यायौ,
कञ्जनैन कृष्ण किधौं कढ़्यौ केलि-जल तें ।
करि ही के कमल तें, कै करके कमल तें,
कमल के नल तें कै कमल के दल तें ॥ ७० ॥

दोहा

सक्र वक्र कौ मद हरयौ , कर पर धरयौ पहार ।
छत्रसाल, प्रभु प्रनत-हित , पावकु कियौ अहार ॥ ७१ ॥
प्रनतारति-भञ्जन बिरद , दायक अभिमत काम ।
छत्रसाल-सन्तानकों , सुभदायक इक स्याम ॥ ७२ ॥

श्रीहरिः

श्रीराम-यश-चन्द्रिका

कवित्त

गंडकी के घाट पय पीवन गयौ हो गज,
तहाँ आय दुष्ट ग्राह ग्रस्यौ सो पगन मैं ।
'आरत-पुकार सुनौ, बिरद बिचारि, मोहिँ,
आतुर उबारि, नाहिँ पावत भगन मैं' ॥
साँची प्रीति जानि, छत्रसाल, चक्र-पानि आनि,
काट्यौ गज-फंद, नाम जाहिर जगत मैं ।
आधो नाम लेतनहीं छन में उबारि लियौ,
साँकरे में 'रा' कह्यौ औ 'म' कह्यौ मगन मैं ॥ १ ॥

राम कह्यौ सदन, कबीर राम-राम कह्यौ,
राम रैदास कह्यौ परमपदु पायौ है ।
राम कह्यौ गज जब रज में मिलन लाग्यौ,
पाछैं परी टेर आपु अग्रहीं सिधायौ है ॥

ग्राह तें छुड़ाय पुचकारि पार ठाढ़ो कियौ,
छत्रसाल राज ऐसो बिरद बढ़ायौ है ।
राम कहौ, राम कहौ, भूलि जनि जाव कोऊ,
राम के कहैयनि में कानैं दुख पायौ है ॥ २ ॥

चंदन सौ दानी है, प्रमानीं चार छंदन सो,
नामी जग-बंदन सौ, फंदनि छुड़ावनो ।
ग्यानी होत यासों, महाध्यानी होत या के लियें,
पंडित पुरानी होत, मंगल-बढ़ावनो ॥
प्रेम होत यासों, जोग-छेम होत यासों, सर्व
नेम होत यासों, जन-मानस-जुड़ावनो ।
कहै छत्रसाल, प्रतिपाल करै दीनन कौ,
राम सौ प्रतापी नाम राम कौ सुपावनो ॥ ३ ॥

गौतम की नारी महापातकिनि तारी, त्यौंहीं
ताड़का सँहारी, पच्छ भारी करियतु हैं ।
कहै छत्रसाल, त्यौं पवित्र कीनो केवट कों,
मित्र कीनो बानर, चरित्र चरियतु हैं ॥
बालमीकि साधु कीनो, गीध कौ सराध कीनो,
मुकत बिराध कीनो, ब्याधि हरियतु हैं ।
एती सुनि बातैं नातें अधम-उधारन के,
यातें, राम ! रावरे गरैंई परियतु हैं ॥ ४ ॥

सवैया

तात तज्यौ अरु मात तज्यौ, पुनि भ्रातनैं आसन तें उतरायौ।
त्यौं, छत्रसाल, तज्यौ सबहीं, बिधि-पुत्रनैं मंत्र पवित्र सुनायौ॥
सो सरनागत-वत्सल के सरनागत होत भयौ मन-भायौ।
चाहत हो ध्रुव ज्यौं ध्रुव धाम सो त्यौं ध्रुवनैं ध्रुव धाम कों पायौ ॥५॥

जैसी करी, जू! करी के कलेस में, जैसी करी सँग गौतम-दार की।
गीध औ ब्याध कों जैसी करी, करी जैसी धना, सदना औ चमार की॥
ऐसिहीँ जानिकैं सेयौ तुम्हैं, छत्रसाल कहै अपने प्रतिपार की।
जो नहिँ तारिहौ मोहिँ प्रभू! उठि कीरति जैहै दसौं अवतार की ॥६॥

कवित्त

सार सब सार कौ, बिचार निगमागम कौ,
निर्गुन सगुन कौ दुभाष-भाष भलु है।
यंत्र मंत्र तंत्र सो सुतंत्र राम-मंत्र सदा,
साधु-सुरधेनु, कामतरु-चारु-फलु है॥
कहै छत्रसाल, चारि चखनि निहारि अजौं,
सुमति सुधारौ, धारौ याहिँ अविचलु है।
चलिगे, चलैंगे, जे चलत हैं प्रतीति मानि,
राम नाम ज्यो कों देत संतत कुसलु है॥ ७॥

चारि जुग आई चलि रीति परमेसुर की,
दासनि पै प्रीति, गीति गावैं चारि बेद है।

सदना त्यौं सुपच, सुभीलिनी, निषाद, धना,
गनिका औ गीध, अजामेल सों न भेद है ॥
साँचे साथ राचे राम, काँचे सों न राचे सुनौ,
साँचे प्रहलाद की प्रतीति की उमेद है ।
कहै छत्रसाल, जगदीस जाय करमा की
खीचरी कों पाय प्रथम कीनो नैबेद है ॥ ८ ॥

जोगिन कौ जीवन, सजीवन है रोगिन कौ,
भोगिन कों भुक्ति, मुक्ति बद्धनि सहाई, रे ।
छत्रसाल, मुंडधर-मानस-मराल, बाल-
इष्ट है भुसुण्डि कौ, अनिष्ट-दंड-दाई, रे ॥
महत मुनीसननैं, देव-ईस-ईसननैं,
जाकी कल कीरति कवीसननैं गाई, रे ।
सब सुख-धाम बसुयाम है अराम-धाम,
राम जपि, राम जपि, राम जपि, भाई, रे ॥ ९ ॥

बानर तें क्रोधी हौं, अबोधी महा गीधहू तें,
काग तें असोधी, यह सोधी दिसा दसु है ।
कहै छत्रसाल, हौं गजेन्द्र तें मदान्ध महा,
दस-मुख-बंध तें महान मोह-रसु है ॥
सौरी तें अयान, अजामेल तें अजान अहौं,
तुच्छ त्रिसराहु तें, न मेरो कहूँ जसु है ।

ब्याधहू तें, अधिक, बिराध तें बिरोधी, राम !
एते पै न तारौ तौ हमारौ कहा बसु है ॥ १० ॥

जानौं न बताय, गुन गायकैं न जानौं कछू,
काम क्रोध लोभ मोह द्रोह दीह दोसं हौं ।
कहै छत्रसाल, ईति-भाति की न भीति मानौं,
सत्रु की न भीति, भव-भीति कों न सोसें हौं ॥
करुना-निधान ! नित्य करहुँ तिहारो गान,
करिहै सहाय जन जानि, मन पोसें हौं ।
हरिये त्रिताप पाप, सुनिये मो साफ-साफ,
हारे हर भाँति, राम ! रावरे भरोसें हौं ॥ ११ ॥

मेरे नैन जुगल चकोर, राम राका-ससि,
काय मन बचन बिलोकि सुख पावैंगे ।
अङ्ग-अङ्ग अमित अनङ्ग-छबि देखि-देखि,
द्वंद दुख भंजि भूरि आनँद बढ़ावैंगे ॥
छत्रसाल, मानस-नदीस बीस बिसे आजु,
अमिय अमन्द चारु चखनि चखावैंगे ।
मोह-भ्रम-जनित बिदारि तम-तोम अब
सीता-वर-चंद उर-मन्दिर बसावैंगे ॥ १२ ॥

जीती नाहिँ जाति बिषै-बासना अजीती महा,
देह जरा-जीती भई खारिज खरीती-सी ।

कहै छत्रसाल, तुम रीती कों भरीती करौ,
रीती तुव बिदित भरीती करौ रीती-सी ॥
करहुँ अनीती नित्य छाँड़िकैं सुनीती, नाथ !
भोगौं भव-भीती, अन्त होयगी फजीती-सी ।
चरन-सरोज-प्रीती दीजिये प्रतीती राम !
राखि मन-चीती, जाति बैस यौंहिं बीती-सी ॥ १३ ॥

भूतनकों पूजि-पूजि चाहत बिभूत, अरे !
धूतन के सङ्ग काम करत कपूती के ।
काय-मन-बचन गँवायें देत औसर तैं,
खात बिष काहे छाँड़ि अमृत, निपूती के ॥
सर्व-उर-बासी सर्वजगत-प्रकासी राम-
नाम सुख-रासी धारौ धर्म मजबूती के ।
आलस में, अनख में, भाव में, कुभावहू में*
छत्रसाल, कहौ, करौ काम रजपूती के ॥ १४ ॥

चौदा चौक पहर† पहार धरि राख्यौ कर,
राख्यौ ब्रज साको मारि मान मघुवा कौ, जू ।
भूल्यौ बलि भूप निज बिक्रम, अनूप देखि
त्रिजग त्रिविक्रम कौ रूप लघुवा कौ, जू ॥

* गो० तुलसीदास कृत 'भाव, कुभाव, अनख, आलसहू । राम जपत मङ्गल दिसि दसहू' के आधार पर रचा गया जान पड़ता है ।

† एक सप्ताह ।

साधो सुन्यौ जो न प्रहलाद-हित साधो तौन,
नर-बपु आधो आधो बेष बघुवा कौ, जू ।
रावन के अछत बिभीषन कों राज दियौ,
भूलियौ न, छत्रसाल, नाम रघुवा कौ, जू ॥ १५ ॥

मीत कै सुकंठ कों जो दीनी बालि-बाला आपु,
वाहू तौ बताई खोजि सीता महरानि हैं ।
कहै छत्रसाल, लङ्क दीनी जो बिभीषन कों,
लङ्का के सकल भेद दीने तेहि आनि हैं ॥
कंचन कौ भौन जो सुदामा कों सँवारि दियौ,
वेऊ तौ चिन्हारीं चटसार की पुरानि हैं ।
हम तौ तब जानिहैं कै हरि बड़े दानि हैं,
बिन पहिँचान जो वै हमैं पहिँचानि हैं ॥ १६ ॥

केवट न सङ्ग, परी आय इत बेबट में,
बीचिनि बिलोरी अति सेवट अपार में ।
कहै छत्रसाल, त्यों भरी है भूरि भारनि सों,
जाँजरी भ्रमै है भूलि भौंरनि बयार में ॥
प्रन के पलैया, प्यारे ! जगत-खिवैया ! आजु,
निज जन जानि चित्त दैवी या सम्हार में ।
पार में न कोऊ जौन आरत-पुकार सुनै,
हाय रघुराय ! मम नाँव मँझधार में ॥ १७ ॥

प्रलय-पयोनिधि लौं बहरा लगन लाग्यौ,
लहरा लगन लाग्यौ पौन पुरवैया कौ।
भारी बहु जाँजरी भरी है भूरि भारनि सों,
धीर न धरात छत्रसाल-से खिवैया कौ॥
महा पारावार परी अलख अगार माँझ,
कीजिये सम्हार आय आसु यहि नैया कौ।
बहन न पैहै घेरि घाटहिँ लगैहै फेरि,
अमित भरोसो मोहिँ राम रघुरैया कौ॥ १८॥

सरस-सुमञ्जु-कञ्जु-बरन, प्रपन्नजन-
रंजन-करन, जे हरन भव-भीता के।
चंन्द्रचूड़ धारैं ध्याय हृदय-सरोज जिन्हैं,
हेरि-हेरि हारे मुनि गुननि पुनीता के॥
कहै छत्रसाल, बेद सकल सराहैं सदा,
ब्यास सनकादि सुक सारद सुनीता के।
असरन-सरन, अधार निरधारनि के,
बन्दौं पद-पदुम पवित्र राम-सीता के॥ १९॥

प्रबल अनेक जीते नीच छल-बल करि,
जैसें-तैसें जोरनि सों गाढ़े गढ़ लिये हैं।
कानन तें कंदर में केहरी करीनि आनि
आनि, छत्रसाल, निज बाहु-बल जिये हैं॥

आन के सदन लेत बदन फुलावत हौ,
पर-धन-हरन में हुलसत हिये हैं।
हाय-हाय ! निपट अभाग्य मंद मानुष के,
हिये माहिँ हरि बसैं, सो न बस किये हैं ॥ २० ॥

सेत भये केसनि के संत न गनाये जात,
पाई जाति जौलौं मन-बचन-मलीनता ।
छत्रसाल, कैसें होत हंस बक छद्म किये,
जानिये बसंत आयें काक-पिक-लीनता ॥
जौलौं तन-वासिन की भूल में हौ परे भूले,
तौलौं नाहिं जैहै कैस्यौ पीन पराधीनता ।
जौलौं सुद्ध सान्ति के समुद्र में न तैरहुगे,
स्याम कें न गाओगे न पाओगे प्रवीनता ॥ २१ ॥

गायबे कें, ध्यायबे कें, सेबे को, सुमिरिबे कें,
तीनि लोक पायबे कें राम-नाम राजु भो ।
मातु-पितु-बंधु-हित, आपुनो-परायो-हित,
बीस बिसे ईस अनुकूल आय आजु भो ॥
धरम-धुरीन श्रीरकार, छतूसाल, छतू,
मुकुट मकार सब-बरन-सिर-ताजु भो ।
जाके नाम राज कें बिराजतु समाज धर्म,
सकल सुकर्मन कौ जाहिर निवाजु भो ॥ २२ ॥

राम-पद-पंकज की रज की बलायें लैहुँ,
जानैं रिषि-पतनी की पत नीकी राखी है।
पाप परिताप पति-साप की न राखी भय,
छतूसाल, अजहूँ निगमागम साखी है॥
दंडक-बिपिन कृतकृत्य भयौ जाहीं रज,
जानि बकसीस गज सीस धरि राखा है।
तिलक त्रिलोक-सीस ताकें आनि मानस में,
जानि परी बिसे बीस, ईस अभिलाखी है॥ २३॥
प्रेम मन जाके ताकें सब सुख-ऐन जानौ,
सकल पुराननि बखान्यौ, छत्रसाल, है।
सौरी, भील, कील, बालमाक बृषली की कथा,
लिखी है, लखी है जहाँ-तहाँ की सुचाल है॥
गीध, अजामेल, तेलनी की नीकी प्रीति जानि,
होतहीं बिहान पाई खीचरी कृपाल है।
नातो एक भक्ति कौ है साँचो भक्त-पालजू कैं,
देखौ कहँ जौन, कहाँ सुपच-हवाल है॥ २४॥
सदना के बँधना के पानी में न मान्यौ भेद,
रैदसा कैं न्योते, मनों जान्यौ सगो नतुवा।
धना कौ जमायौ खेत बीज बिनु, ऐसो हेत,
जगत-बिदित कल कीरति कौ केतुवा॥

कहै छत्रसाल, मित्र कीनो क्रूर केवट कों,
लीनो ताहिँ अंक में पसारि दोऊ हतुवा[१] ।
मेवा षटरसनि तें अधिक सराहे पाय,
सवरी के बेर और बिदुर कौ भतुवा[२] ॥ २५ ॥

हरिष हरी फिकरि पर-धन छीनि-छीनि,
बनिगो अवनि-पति दीननि सँतापी कों ।
कहै छत्रसाल, बालपन तें करे ए काम,
नित्य पर-बाम-रत, अनृत-अलापी कों ॥
करुना-निधान राम ! यह करतूत देखि
करि है को गौर छाँड़ि आपु-से प्रतापी कों ।
हेरियौ बिरद ओर, धरियौ न फेंट छोरि,
जोरि जुग पानि कहौं, मोसे घोर पापी कों ॥ २६ ॥

चाहनैं न बुद्धि बड़ी, सुद्धि अंग-अंगनि की,
जोग-जाग-रंगनि में रँगनैं न राई, रे ।
कहै छत्रसाल, कछू सीखनैं न सीख बड़ी,
दीखनैं न दीख तुक-अच्छरु-दिखाई, रे ॥
महत मुनीस सुर-ईस ईस-ईसनिनैं,
जाकी कल कीरति कवीसनिनैं गाई, रे ।

१. हाथ । २. बथुवा का साग ।

सुधो-सो सुनाम, बसुयाम है अराम-धाम,
राम जपि, राम जपि, राम जपि भाई, रे ॥ २८ ॥

देत जिन्हैं गारी जन बरसें न-बरसें हूँ,
तिनहिँ बिसारि तौहू पूरन मया करैं ।
कहै छत्रसाल, लोक-पाल हैं सरन जाकी,
भरिकैं भरन सिर चरन नया करैं ॥
नारद मुनीस सनकादि सुर-ईस-ईस,
बिदित गिरीस नाम नितहीं लया करैं ।
राम रघुनायक बिसेष बरदायक ते,
होत हीं सरन जनदीन पै दया करैं ॥ २९ ॥

रचि-पचि हारे कवि-कोविद बिचारे सब,
सम्भु रहे ध्यान औ स्वयंभु रहे गान करि ।
व्यालपति रहे देखि ख्याल खूब फागनि कौ,
गौरि रही गोद लै गनेस सिर पानि धरि ॥
औध रही रंग-पूरि महकि सुगंध रही,
सरजू ह्वै रही लाल-लाल रंग-स्रोत सरि ।
एक ओर कुँवरि-किसोरी, रही छत्रसाल,
एक ओर कुँवर-किसोर रहे रंग भरि ॥ ३० ॥

कौन है उदार राम-नाम-सो उधारवारो,
जाकी सासना में कामधेनु काम-तर है ।

बदत पुरान बेद-आगम कौ सार यहै,
नाम के प्रताप मारयौ मार देव-वर है ॥
बर्ननि कौ भूषन ए, बर्नत है छत्रसाल,
नाम ही के हाथ करामात चराचर है।
नाम कौ प्रभाव भाव जानि गनराव नीको,
दायक दुनी कौ भयौ मंगल-सुघर है ॥ ३१ ॥

नर तें अधिक दौरैं पच्छी अंतरिच्छ माहिँ,
पच्छी तें अधिक दौरैं नीर नद भीर के।
नीर तें अधिक दौरैं, छत्रसाल, सिंह बली,
सिंह तें अधिक दौरैं तीर रनधीर के ॥
तीर तें अधिक दौरैं पौन के झकोर जोर,
पौन तें अधिक दौरैं नैन या सरीर के।
नैन तें अधिक दौरै मन तिहुँ लोकनि में,
मन तें अधिक दौरैं बाजि रघुबीर के ॥ ३२ ॥

सरन तुम्हारियै में परयौ हौं तुम्हारो जन,
पालौ, चहै घालौ, चहै लालौ, चहै जो करौ।
नामी बदनामी, महा कामी कूर कामनि में,
अधम तमामनि में आम नाम मो परौ ॥
मेरी मात जानकी ! प्रमान की न मानौ जोपै,
बूझि किन देखौ रामैं, यामें न गुसा धरौ।

तेरो होय, छत्रसाल, तू त्रिलोकपाल ख्यात,
मेरो प्रतिपाल, मात ! तू बताव दूसरौ ॥ ३३ ॥

नाम-बल साँचो, जाकी ओट प्रह्लाद बाँचो,
नाम-बल साँचो बालमीक साखि साँचो है ।
नाम-बल धाम नित्य पायौ गज-गीधहूँनैं,
नाम के प्रताप सम्भु-सूनु रंग-राँचो है ॥
नाभा नामदेव नाम ही के बल नामी भये,
नाम कौ प्रताप बिधि बेदनि में बाँचो है ।
नाम-बल जाकैं साँचो सोई बली, छत्रसाल,
और सब काम काचो, काचो फेरि काचो है ॥ ३४ ॥

पतित-पुनीत राम-नाम कलि काम-तरु,
औढर-ढरन जग-तारन-तरन है ।
आरति-हरन जन-पोषन-भरनवारो,
बिरद बिलंद, दीह दोष कौ दरन है ॥
अधम-उधारन सुधारन धरा पै धर्म,
कारन सुकर्म कौ, उबारन बरन है ।
छत्रसाल-पाल है, कृपाल है, दया-निधान,
साँचोई दीनबंधु, असरन-सरन है ॥ ३५ ॥

तीज पर्व पावनि सुहावनि है आई आजु,
पूजन कों सोमबट गोठि बनितान की ।

मानों घनस्याम कों रिझायबे अनेक बेष,
आईं चारु चंद्रमुखीं तुल्य तड़ितान की ॥
कैधौं कान्ति दीप-मालिका की चंद्र-मालिका की
एक ओर है करोर, एक ओर जानकी ।
जोरि-जोरि पानि सीता कहैं 'राम' छत्रसाल,
राम कहैं 'सीता' लैकैं बोदर* लतान की ॥ ३६ ॥

राम-पद-बिमुख कौ मुख न दिखावै राम,
छत्रसाल माँगतु है आठों जाम राम सों ।
जोरि-जोरि हाथ, माथ नाय राम-पायनि पै,
'पाहि पाहि !' कहौं हाहा खाय ऊँचे ग्राम सों ॥
खायबो गरल पै न जायबो निकेत वाके
भूलिहूँ भलो है, कहा परी वाके काम सों ।
होय जो प्रचेता तौहू जनम हराम वाकौ,
जन्म-जन्म राखिबी छतीस वाके नाम सों ॥ ३७ ॥

सवैया

नाम की कीरति राम कहैं नित, आननपंच, बिरंचि बखानी ।
त्यों गजतुण्ड, भुसुण्डि, गिरा, सुक, नारद, भूप छता रुचि मानी ॥
नाम निरंजन, अंजन राम, प्रमान-प्रमान औ प्रानहुँ-प्रानी ।
नाम लियें प्रभु बास करैं हिय, ज्यों गुन गागर सागर पानी ॥३८॥

* छड़ी ।

नाम-प्रताप बली सब भाँतिनि दासनि के दुख-दोष निवारै ।
दूरि करै जन-संकट-सोच औ आधि रु ब्याधि तें जीव उबारै ॥
भंजहि भीति औ ईति सबै, नित जीति रहै, प्रभु-प्रीति पसारै ।
मानस-पाप-कलाप कुकंटक, भूप छता, परितापहिँ जारै ॥३९॥

कवित्त

तारे, नाथ ! अधम उतारे भव-सिंधु-पार,
हारे का हमारे भारे कलुष सुनि-सुनिकैँ ?
कहत 'मुरारे ! हरे !' तारे पातकी-बरूथ,
नाम-बल, छत्रसाल, सुने पुनि-पुनिकैँ ॥
वारि-कन रज-कन सँवारि, हरि ! जानै को,
तारे आसमान के तिहारे गुन गुनिकैँ ।
हारे कहि तेरे गुन द्वै हजार जीहवारे,
देव दै नगारे गावैँ गान चुनि-चुनिकैँ ॥ ४० ॥

सवैया

तीनि तेँ चौथो सुन्यौ न कबौं गुन, पाँच तें षष्ठ न तत्व बखान्यौ ॥
लोक चतुर्दस तेँ नहिँ पंद्रह बूझि छता चहुँ बेद जहान्यौं ॥
ते मिटि जाहिँ महापिरलै, तब तीनि स्वरूप कहाँ घर ठान्यौ ?
सो कहियौ, जू! कृपा करिकैँ, कहुँ नाम-सो सार नहीँ पहिँचान्यौ ॥४१॥

कवित्त

जानै को जुगत सिंधु सिंधुर के तारिबे की,
असुर सँहारिबे की और की न गत है।
नीर, छिति, पावक, समीर, नभ, छत्रसाल,
राखै एक भाजन में कौन की सिपत है ?
लूम हनुमान कैसी बसन बढ़ाय जानैं,
बिपत बिहाय राखी द्रौपदी की पत हैं।
अगम अनंत वाही राम के प्रतापु आपु
थित है त्रिलोक, जाकी माया कौ न मित है ॥ ४२ ॥

बोले राय जनक सुभाय हत-आस, "हाय !
पैज इन भूपनि की पोच परि गई है !"
जोरि कर-कमल निहोरि कह्यौ कौसिक सों,
"दीजिये निदेस रामैं मेटि दुचितई है ॥"
जच्छ, जातुधन-पति, भूप दीप-दीपनि के,
आयकैं अतेज भये देखि रविमई है।
बिजय बिभूति करतूति, छत्रसाल, नाथ-
हाथ लगी करामात जाकी निरमई है ॥ ४३ ॥

बीर आन कौन है समान रघुबीरजू के,
कौन तींनि भौन ऐसो पूरन-कृपा हियौ ?

कौन सिला तारी, कौन सिंधु पै तराई सिला,
केवट कों मित्र कै पवित्र गीध को कियौ ?
कौन देव सवरी कों ऊँचो पद दैनवारो,
कौन गहि बाँह हीन रंक अंक में लियौ ?
प्रनत-कृपाल, छत्रसाल, रामचन्द्र छाँड़ि,
कौन कपि-भालु-दल मृतक जिवा दियौ ? ॥ ४४ ॥

सरद-ससांक कोटि, कोटि-काटि कंद्रपहूँ,
राम घनस्याम-छबि ऊपर निछोरियै।
अखिल निकाई लोक-लोकनि की मंजुताई,
अंग-अंग ताईं, छत्रसाल कहै, थोरियै ॥
उपमा न आन, और सुषमा न आन कहूँ,
राम के समान राम-रूप-गुन जोरियै।
मोरियै न मनहिँ निहोरियै न औरनि कों,
तोरियै न नेह, रूप-सिंधु में हिलोरियै ॥ ४५ ॥

बेदनि कौ सार, औ अधार है पुरारि-ही कौ,
रंक औ गनी कौ नीको रच्छक दुनी कौ है।
लोक-लोक-लीको, मोद-दायक, अमी कौ सिंधु,
लायक, सहायक जो साँचो द्रौपदी कौ है ॥
कहै छत्रसाल, हाल पालक हमारो, जानैं
बारन उबारयौ, गीध तारयौ जून जी कौ है।

बालमीकि, व्यास, सुक, नारद बखान्यौ, ऐसो
बन्दौं राम-नाम सर्व बरननि टीकौ है ॥ ४६ ॥
संग लै सखान मणि-अद्रि के समीप झूला
झूलि रहे होड़ीं-होड़ाँ अवध-भुवाल हैं ।
सावन की तीज तजबीज करि जोरी जोरी,
स्याम-स्याम, गोरे-गोरे जोरे राज-बाल हैं ॥
झूलैं औ झुलावैं कोऊ पैंगनि बढ़ावैं गावैं,
देखि सुख पावैं सर्व लोक, लोक-पाल हैं ।
दीसैं ईस मुदित असीस बगसीसैं देत,
लेत बिसे बीसैं महामोद छत्रसाल हैं ॥ ४७ ॥
साख निगमागम, पुरान, सम्भु, हनूमान,
सेष, हेरंब गावैं गुन-कदंब राम के ।
कुंभज, भुसुंडि आदि सवुहादि, छत्रसाल,
सुगम कहे तें पै अगम परिनाम के ॥
भूलत भुलायेंहूँ न भरत कौ नेह-नेम,
साँचे एक सोई हैं पपीहा राम-नाम के ।
जापी आठजाम के, प्रतापी राम-काम के, त्यौं
थापी धर्म-धाम के, कलापी घनस्याम के ॥ ४८ ॥
करहु सुकर्म सदा धर्म के धरनवारे,
पापनि हरनवारे जाहिर जहान में ।

बोलौ बोल सत्य, करौ भूलिहूँ न अत्त जानि
'राम सर्वत्त,' ध्यान धारहु भगवान में ॥
कहै छत्रसाल, दीन पालिबे की बान धारौ,
मानियौ प्रमान लिखी बेद औ पुरान में ।
दाया में बसतु राम सकल सुधर्मनि में,
एती पहिँचान भली करुना-निधान में ॥ ४९ ॥

सरन निबाहुवारे, प्रबल सुबाहुवारे !
ध्यावतु छतारे तुम्हैं उमँगि उछाहु सों ।
असुर कतारे जोर जोमवारे डारे मारि,
जारि डारे लंक में अतंकवारे चाहु सों ॥
डारे सिंधु पूर में जहूर जुल्मवारे भारे
भारे भट निपट निकारे गारे ताहु सों ।
'जैति-जैं' उचारे देव मुदित नगारे दै-दै
देखैं, गयौ रावन-उछाहु बीस बाहु सों ॥ ५० ॥

सीता-नाथ, सेतु-नाथ, सत्य-नाथ, संभु-नाथ,
नाथ-नाथ, देव-नाथ, दीन-नाथ, दीनगति ।
रघु-देव, जदु-देव, जच्छ-देव, देव-देव,
विश्व-देव, बासुदेव, ब्यासदेव, देव-रति ॥
रनबीर, रघुबीर, जदुबीर, ब्रज-बीर,
बल-बीर, बीर-बीर, ब्रतबीर, चारुमति ।

राग-पति, रंग-पति, रमा-पति, छता-पति,
राधा-पति, रस-पति, रसा-पति, रास-पति ॥ ५१ ॥

द्विजनि असीस होति, संपति समूह होति,
सुजसु-सुब्यूह होत मङ्गल सुसिद्ध है।
कहै छत्रसाल, नाम-माल सी न माल आन,
छुवत बिसुद्ध मन, होति नव निद्ध है ॥
नीचपद-गामी कामी ऊँच-पद-गामी होत,
नाम कौ प्रताप पुन्यपूरन प्रसिद्ध है।
आधि होति बध्य, भूरि ब्याधि होति रद्द, सद्य
साधि होत सिद्ध औ समाधि होति वृद्ध है ॥ ५२ ॥

गाई बिधि बेदनि में, व्यासजू पुराननि में,
बालमीकि रामायन परम प्रसङ्ग में।
नारद बिसारद त्यों सारद औ सेष मिलि,
गाई है गनेसहूँ सुरेस शिव सङ्ग में ॥
पारावार-पार कों न पाय, छत्रसाल कहै,
मति-अनुरूप राम-सुजस उमङ्ग में।
मेरी मति अल्प तेरे चरितकलाप सिंधु,
दीजै अवलंब, कृपासिन्धु ! या तरङ्ग में ॥ ५३ ॥

दीन कौ दयाल है अधार निराधारनि कौ,
रङ्क अरु गनी कौ निवाजक दुनी कौ है।

नाम बल नामी होत, छाँड़ि बदनामी होत,
पोत बिनबारि ज्यों निजोत दीप फीकौ है ॥
छत्रसाल, जीकौ मत दायक, सु नीको नाम,
श्रीपति कौ, सङ्कर कौं, ब्रह्म-भाल-टीकौ है !
करि निरधार देख्यौ, बेदहूँ बिचारि देख्यौ,
सार देख्यौ सब कौ, न पार नाम ही कौ है ॥ ५४ ॥

गौरी प्रति संभु, भरद्वाज प्रति याग्यवल्क्य,
घटज सुतीक्ष्ण प्रति श्रवण कराई है ।
खग-पति कौं काग, देवरिषि बाल्मीकजू कौं,
बाल्मीकजूनैं लव-कुसहिँ पढ़ाई है ॥
राम रनधीरजू कौं बीर धीर लौ-कुसनैं,
गाय-गाय बीन लै प्रबीन अरपाई है ।
एते ए प्रसङ्ग, बजरङ्ग कौं सुनाई राम,
रामायन, छत्रसाल, लोक-लोक छाई है ॥ ५५ ॥

सवैया

मानुष कौ मुख मन्दिर सुंदर, थापहु जानकी-नाथ के नामैं ।
भेकनि के मुख में नहिँ सार, न स्वाद विवादनि की चरचा मैं ॥
सूकर स्वान कुवाकनि में बसि लाज न लागति या कुदसा मैं ।
भूप छता कहि, तोहिँ जनावतु नाम रटावतु आठहुँ जामैं ॥ ५६ ॥

कवित्त

आगम निगम कह्यौ, कोविंद कविनु कह्यौ,
कह्यौ है पुरान सहसानन निहोरि है।
सनक, स्वयंभु, संभु, सिवा औ गनेस कह्यौ,
नारद सुक कह्यौ पै न पायौ वा छोरि है॥
कहि-कहि हारे तीनि लोक-जीभवारे तहाँ,
चाहतु छतारे, प्रभु ! तेरी कृपा-कोरि है।
जोरि-जोरि बर्न चारु बर्नन, कृपालु ! कहौं,
तारन-तरन तुव कारन करोरि है॥ ५७॥

राम कहौ, भाई ! भाई-बन्धु में न भूलि जाहु,
भजन कबूले बिन दूजी नहिँ जगा है।
तोरे तें सनेह, मुख मोरे तें बनैगो नाहिँ,
जहाँ-तहाँ ठौर-ठौर याकौ जगमगा है॥
भूलौ मति आसन सिँहासन अवासनि में,
बसन-सुआसनि सुपासनि में दगा है।
सोई है सयाना जा कौ नाम सों लगा है तगा,
छत्तसाल, भूला ताहि सोई नर ठगा है॥ ५८॥

पारावार भौ को नाम-बोहित तिहारो भलो,
मानस-मलाह की सलाह पार जैबो है।

कुमति-बयार कों बराय बाँधि बादमान,
आपने स्वरूप कों पिछानि काम दैबो है ॥
दाया सो न बित्त और नित्त दैन, छत्रसाल,
पालिबो गरीबनि कौ श्रीपति हितैबो है ।
नाहीं तौ बितैबो जन्म भक्ति के बिनाहीं बृथा,
बोहितै रितैबो जैसें नीरधि चितैबो है ॥ ५६ ॥

सवैया

सम्मत बेद-पुराननि कौ मुनि ग्यानिन कौ मिलि एक मता है ।
नाम महाभव-सिंधु कौ बोहित जो हित मानि चढ़ै सुमता है ॥
संतत संत प्रसंसत नामहिँ, नामहीँ रामहिँ देत जता है ।
नाम-प्रताप सनाम छता, जोइ राम-रता सोइ पार-गता है ॥ ६० ॥

कवित्त

सहज बनाई सर्वभाँतिनि बिभीषन की,
अभै कृपालु कियौ जानि निज सरनई ।
रावन कौ मार्‌यौ औ निकार्‌यौ कौन राच्छस कों,
छत्रसाल, सकै राखि, ब्रह्माहू न निर्मई ॥
दीनहित बिरद बिचारि ताहि पच्छपाल,
बोलि 'लंकेस' कह्यौ, बाहँ कर गहि लई ।
सुनत भरोसो होत पोसो होत, तो सो कौन,
मोसे क्रूर कायर कुराही की बनि गई ॥ ६१ ॥

प्रभु-अवतार कौ न पायौ पार करतार,
जा कर बनायौ जौ तिलोक तोम तूत है।
सतत बिचारि त्रिपुरारि जाकौ नाम जपै,
साधिकैं समाधि नाधै नाम की बिभूत है॥
प्रकृति-प्रधान राम-नाम धाम-धाम भ्राजै,
बिदित बनाय बेद-आगम अभूत है।
त्रिगुन, त्रिकाल, तीनि लोक, तीनि देव कहैं,
छत्रसाल कहै, रहै वाही कर सूत है॥ ६२॥

दैबो नित्य उचित, बिचारि देखौ, सबही कों,
लैबो है उचित एक साँचो नाम राम कौ।
मुदित गरीब कों निवाजै गाढ़ गाढ़ा परैं,
स्वामि-धर्म साजै सो बसैया परधाम कौ॥
मेरो कह्यौ नाहिँ, बेद-आगम कहत आये,
दाया महँ बासु, छत्रसाल, धर्म-ठाम कौ।
पेखनो सो बिधि कौ प्रपंच चित्र-लेखनो सो
जैहै मिटि, रैहै, जू! रुचैया सत्य नाम कौ॥ ६३॥

दिग्गज दुचित्त चित्त सोचत पुरंदर भे,
आजु मेरे करि कों का भिच्छुक बिलसिहैं।
देत गज-दान भूप दसरथ राज आज,
राम-जन्म भये कौ बधावनो हुलसिहैं॥

हाथी लै हजारन के हलके सु जाचक हूँ
आछे अलकेस मनों आयकैं सुबसिहैं ।
गोय लै गनेस गिरिजा सों, छत्रसाल कहै,
गज के भरम तें भिखारिन बगसिहैं* ॥ ६४ ॥

सवैया

चाहैं तौ मेरु करैं रजतें, रज रंचक चाहैं तौ मेरु समाहैं ।
जे जन पालतीं, ख्यालतीं ख्यालन तीनिहूँ लोकन की महिमा हैं ॥
छत्रसाल कहै, तिनकी उपमा कहि को, कलपद्रुम कामदुघा हैं ।
हैं भव-भीर की मेटन पीर की श्रीरघुबीर समर्थ की बाहैं ॥ ६५ ॥

दोहा

जप तप संयम यम नियम, छता, निगम नित गाव ।
कोटिन अपराधी तरे, केवल नाम-प्रभाव ॥ ६६ ॥
राम-नाम नहिं लेत है, बकत बृथा, छतसाल ।
जिमि दादुर-कुल कमल तजि, भखत कुकीट कराल ॥ ६७ ॥
सुहृद कीस केवट करे, पल्लव करे पखान ।
छत्रसाल, राजा करे, सरन बिभीषन जान ॥ ६८ ॥
मन बुधि चित्त इकंत करि, हंस करहु निज हंस ।
छत्रसाल, या बिधि द्रवहु, हंस-बंस-अवतंस ॥ ६९ ॥

---

* भूमिका देखिए ।

श्रीहरिः

हनुमद्-विनय

मल्ली*

कहिबो उन सों मुख बाहिर की, मन की नहिँ जानत ताहिँ जनावैं।
छत्रसाल कहै, उर की पहिँचानत ताकहँ को कहि कर्म सुनावैं॥
कहि नेति बखानत हैं स्रुति सेष तहाँ कवि कोविद कौन गिनावैं।
हनुमान! तुम्हैं हम से खल पामर दंतकथा कहि आजु मनावैं॥ १॥

मदिरा†

गावत श्रीरघुबीरहिँ बीर सुध्यावत श्रीरघुबीर बली।
राम-प्रसाद-प्रताप बली करि दाप हने मनुजाद छली॥
भूप छता के बली हनुमान करै सरनागत की सु भली।
बेद भनैं, धनि बायु-तनै, तुम सों लगी धर्म-मृजाद-गली॥ २॥

गंगाधर‡

लीजिये नाम ताकौ सदा सर्वदा,
नर्मदा मोद-दा अंजनी-लाल है।

* इसे सुन्दरी और सुखदानी भी कहते हैं।
† इसे मालिनी, उमा और दिवा भी कहते हैं।
‡ इसे लक्षी और खंजन भी कहते हैं।

जानकी-नाथ के काज सारे महा,
रुद्र-औतार, भौ-तार, गोपाल है ॥
दास की आस पूजै, छता, मो हितै,
हेरि दै कै कृपा-कोर, श्रीभाल है ।
स्वर्न-सैलाभ-संकास बालार्क-भा,
बीर हनुमंत सो सत्रु कों घाल है ॥ ३ ॥

मकरंद§

प्रभात-प्रभाकर सो दरसै बपु तुंड प्रबाल अखंड लजानै ।
अजान तुम्हैं पहिंचानत ठीक, जथा सिसु मातु-पितै पहिंचानै ॥
सनातन की यह रीति, छता, सरनागत की परतीति प्रमानै ।
बिभीषन कौ दुख देखि प्रभंजन-नंदन लंकहिँ दीन कृसानै ॥४॥

डमरू

गिरि-धर गिरि-चर प्रभुवर-उर-धर,
रघुवर-चर-वर, जय जय जय-कर ।
प्रभु-पद-रज-धर, जय-धुज-कर-धर,
जय जय जसधर, जय भव-भय-हर ॥
जयति बिजय-धुज छतहिँ करहु कुज,
जयति जयति अज ! जय मम मन भर ।

§ इसे माधवी, मंजरी और वाम भी कहते हैं ।

जय जय पवन-तनय त्रिभुवन कह,
जय प्रनमत सब पद सिर धर-धर ॥ ५ ॥

अरसात

अंगद कों मिलिकैं हनुमंत मिल्यौ पुनि बानर-भालु-समाज कों ।
कूदि चढ्यौ गिरि सुन्दर पै जन-भूप, छता, सुर-राजहु राज कों ॥
लंक बिलोकति मो कहँ अद्रि समुद्रक छुद्र हमें प्रभु-काज कों ।
रावन राजहिं देखतहीं करिहौं उतपातहिं लंक-अकाज कों ॥ ६ ॥

सारिणी*

समाचार चाहौ भले तौ महाबीर कों
पायकैं पाय नीकें गहौ, जू ।
सुनौ प्रान पाँचो हमारे, हमारो मतो,
जानकी-सोक-हा कों कहौ, जू ॥
बड़ी ठौर की पौर कौ सेयबो ठीक है,
नीक है जो चहौ सो लहौ, जू ।
तजै अंजनी-लाल कों जानि, छत्ता कहै,
सो अघा घोर जानौ, बहौ, जू ॥ ७ ॥

मुक्तहरा

'महाबलि हौ, हनुमंत !' कह्यौ सिय-कंत कृपा करि राजिव-नैन ।
'रिनी हम, तात ! तुम्हार सदा, न अदा तुम तें, हम भाखत बैन ॥

---

* चरखारी की प्रति में इसका नाम 'महता सवैया' दिया है । इस से 'सिंह विक्रीड़' मिलता है । अंतर इतना ही है कि उसमें ९ यगण होते हैं, और इस में ८ यगण ।

चहौ सु लहौ तुम भक्त-सिरोमनि ! तो मन में मम भक्ति-सुऐन ।'
छता, कहि जै जय सीस नयौ करुनाकर के कर सों बर लैन ॥८॥

चन्द्रकला †

करिये, प्रभु ! सो प्रभुता करिकैं,
प्रभुता करिकैं गिरि द्रोन लियौ ।
स्रुति साखि बिलोकि बखानत जानत,
सेषहिं आपु सजीव कियौ ॥
सुख साजि सुकंठ बिभीषन कों,
प्रभुता करिकैं, प्रभु ! राज दियो ।
सुनि, भूप छता बिनती बिनवै,
लघुता-बस दास धिकार जियौ ॥ ९ ॥

सुन्दरी

न डरे जब सिन्धु तरे, प्रभु ! छाँह गहैं न डरे स्वर्भानु की मातै ।
न डरे सुरसै मग आय अरी, गढ़ लंक छरी छरि देव-अरातै ॥
न डरे गिरिद्रोन-उपाटन में, न डरे मग ब्यूह अदेव के घातै ।
प्रभु के सब काज किये सब भाँति, छता जन के अरि क्यों न निपातै ॥१०॥

मकरन्द

किये प्रभु-काम, छता, बसुयाम हिये सिय-राम मुकाम करैं, जू ।
महाबलवान बिजै-जयमान, सदा भगवान भुजानि भरैं, जू ॥

† इसे दुर्मिल भी कहते हैं ।

अदेव रु देव सबै छबि देखि कँपै डरपैं नित ध्यान धरैं, जू ।
लहैं सुख सान्ति सुभागनि अंजनि-नन्द के आय जे पाय परैं, जू ॥११॥

कवित्त

सरन तिहारी लई साँची सुनि, राम-दूत !
तेरो चहुँ, दीनपाल ! दीरघ सुजसु है ।
उचित बिचारि छत्रसाल तेरे द्वार आयौ,
हा-हा लौं ।बनै पाय परिबे लौं स्वबसु है ॥
आपुनो-बिरानो भलो बुरो सबै जानि परै,
मोकों कहा भयौ एती जानत हवसु है ।
समय परें साँकरे में हाँकरें निसाँक रे,
सरन बुलायें कोऊ मारत न असु है ॥ १२ ॥

लया*

त्राहि हमैं, सिव ! सोक-बिमोचन,
पाहि हमैं, प्रभु छेमङ्कर ।
काज किये करुनाकर के,
प्रतिपालि, प्रभो ! प्रभु-नेमङ्कर ॥
द्वै कर जोरि छता प्रभु ओर,
निहोरि कहै, जय, हेमङ्कर ।

* इस छन्द का यही नाम चरखारी की प्रति में भी मिलता है । ज्ञात नहीं, इसका अन्य नाम और लक्षण क्या है ।

जाय न बादि फिरादि कहूँ,
यह गावत हैं नित बेदद्धर ॥ १३ ॥

आभार

संसार कों प्यार है आपुनोई भलो,
आपु कों दास की लाज कौ प्यार ॥
आसाहिँ पूजै बदैं बेद चारों सदा,
अंजनी-बात-बिख्यात-कोमार ॥
बानैत बीरं, बिभो ! धारि संग्राम जै,
जीति लंकाहिँ पाथोधि कै पार ।
ताता ! तिहारे परै पाय छत्ता, अहो !
वायु-लाला ! लखौ मो समाचार ॥ १४ ॥

किरीट

संकि रह्यौ तुम कों लखिकैं मन संकर-दास भयङ्कर रावन ।
गावत गीत पुनीत सदा, तुव ध्यान मुनी-मन-मोद-बढ़ावन ॥
जानकि-सोच-बिमोच्चन कों उर धारि, छता, अरि-धार-नसावन ।
सङ्गर-जै-कर श्रीमहबीर-पताकहिँ ताकहि मो मन-भावन ॥ १५ ॥

आभार

काकोदरी सिंहिका लंकिनी कातरी,
ज्यों छरी, नाथ ! त्यों वीर्य विस्तारि ।

जो मोहि हीनो तकै देखि नाहीं सकै,
ताहि कों कालनेमादि सो गारि ॥
है गर्व जाकों, कहै छत्त ताकों, प्रभो !
लङ्क-पज्जारिनी पूँछ सां जारि ।
देखें तुम्हैं गीध सम्पाति कें पंख भे,
देव निस्सङ्क भे, सो हियें धारि ॥ १६ ॥

सारिणी*

नमामी महावीर वीराग्र, मेरो महा
बीर के नाम सों काम हो बीस ।
महाबीर श्रीराम के नाम कौ रूप,
सुग्रीव जानैं कियौ बानराधीस ॥
महाबीर, गम्भीर है ज्ञान में, ध्यान में,
सान संग्राम में, सत्रु कै खीस ।
महाबीर कीजै छता आपुनो दास,
विश्वास कै भक्त, भक्तान के ईस ॥ १७ ॥

मुक्तहरा

बिभीषनै राजु सुकण्ठहिँ राजु, किये रघुराजहुँ के दुख दूर ।
समर्थ अनंत अहैं हनुमन्त, छता, प्रभुता सुनि भो सुख भूर ॥

*इस छन्द को भी दोनों ही प्रतियों में सारिणी लिखा है, यद्यपि संख्या ७ के छन्द से इसमें, अन्त में, एक लघु अधिक है ।

थपे उथपे, उथपेहुँ थपे, रजतें किय मेरु, औ मेरु तें धूर ।
बड़े लघुहूँ करि देत बड़ो, जिमि राम किये बड़ भालु लँगूर ॥ १८ ॥

दंडक

नमो बात-संजात कों, अंजनी-तात कों,
आदि-अंतै-प्रजंतै परा प्रीति सों ।
कृपा-पात्र श्री-कंत कौ संत भाखैं यहै,
स्वर्न-सैलाभ-संकास की रीति सों ॥
गहै पाय तेरे, छता, छेमदा प्रेमदा
रीति सों, नीति सों, गीति सों, प्रीति सों ।
महाबीर बीराग्र पाथोधि लीला तर्यौ,
ना डर्यौ आतपा-सीत की भीति सों ॥ १९ ॥

क्षुधा

गोपाल के पाय कौ ध्यायबो धन्य,
गोपाल कौ गायबो धन्य, भाई ।
गोपाल श्रीअंजनी-लाल जैमंत,
जो गायहै पुंस, ताकी बड़ाई ॥
वारीस कों लंघि लंका जराई,
बिजै रामकी रावनै जा सुनाई ।
गोपाल श्रीअंजनी-लाल सो धाय
कीजै, कृपा-नाथ ! छत्ता-संहाई ॥ २० ॥

मत्तगयन्द

जैकर राम-धुजा-धर देव, बिजैकर देव, दया करि हेरो ।
हे सरनागत-पालक देव, अधीननि कों तुव ठौर बड़ेरो ॥
संकट-मोचन लोचनपिंग, महाबल-सिंध ! हरौ दुख मेरो ।
आरत-दीन-पुकार सुनौ अब, तो बिनु काम नहीं सब केरो ॥ २१ ॥
तुम कों, हनुमंत ! कहैं सुर संत निरंतर राम करैं दाया ।
निज राजु दियौ रघुराजु तुम्हैं सरजूपुर कौ स्तुति में गाया ॥
महराज, करौ चिरराज छता, जन पालहु मोह हरौ माया ।
प्रभु-नाम-प्रताप तन्यौ सिर छत्र, रहौ जन-माथ सदा छाया ॥ २२ ॥

मल्ली

तुम सो प्रभु और, कहौ तुमहीं, केहि ठौर बसैं, जेहि जाय निहोरौं ।
तुर हौ, फुर हौ, सबलायक हौ, खल ऊलर कौ कह गूलर फोरौं ॥
बिन राम-रटी रसना मुख के अब सम्मुख जाय कहा कर जोरौं ।
सिय-राम के नामहिं राखु, छता, सुनु, वायु-तनै ! तुव आस न छोरौं ॥ २३॥

किरीट

राम-बिजै-कर के धुज पै हनुमान लसैं मनु प्रात-दिवाकर ।
केतक पामर पाय परैं, बहु आय गिरैं कहि 'पाहि, दया-कर' ॥
राम-प्रताप-भरयौ तनु राजत, राज छता, प्रभु ! पातु प्रभाधर ।
किंकर जानि हमैं प्रतिपालहु, संतत तोहिं प्रसंस सियावर ॥ २४ ॥

कवित्त

जैसे एक अजया कों अदया अहीर तज्यौ,
जरा जानि निदरि, कहा काजु सरनै है ?
ठानिकैं मरन सो केहरि के सरन गई,
'है प्रतिपालनै, कै हाड़-माँस चरनै है ?
बोल्यौ मृग-राज, 'हौं तौ सरन-समर्थवारो,
छत्रसाल, पालि तोकों सरन धरनै है ।'
वह मृगराज, आपु साखा-मृग-राज-राज !
बिसे बीस, ईस ! मोहिं सरन करनै है ॥ २५ ॥

हंसी

जै, मा-नाथं-गीता-गाथं, सुमति-सदन, तुव चरन-सरन ।
जै जै जै श्री-सोकं-नासं, दुखन-दवन-कर, सुखन-भरन ॥
राघौजू कौ भ्राता-त्राता, छतहिँ मुदित-कर, दुसह-दरन ।
लंका लीलाहीं लील्यौ तैं, कहत जयतु जन, बिजय-करन ॥ २६ ॥

मदिरा

रावन-मान गयौ, न रह्यौ बल, सान गई हनुमान-करै ।
भ्रात बिभीषन सो इनके बल, केवल मोहिँ ए जानि परै ॥
गीध सपच्छ भयौ जेहिं देखत, भूप छता छबि ताकि तरै ।
तापस-साप गई भय दूरि, प्रताप महा कहि पाय परै ॥ २७ ॥

दीर्घ *

सीतारामै पूज्यौ जा नैं,
सीतारामै बूझ्यौ जा नैं,
ताकों का संसारी त्रासा ।
हारे कै-कै लेखा-नाथा
लेखा, सेषा, धाता ज्ञाता,
औ संभू कैलासा-बासा ॥
जाके काजैं ध्रू नैं ध्यायौ,
सो वा नीको फीको जान्यौ,
पाल्यौ-लाल्यौ 'छाता' दासा ।
सिंधै नाको, सांको बाँको,
राघौजू कौ खासा दासा,
जै जै, मोकों ताकी आसा ॥ २८ ॥

सोने कैसो सैला ! तौकों
बन्दौं, नन्दौं ही तें जी तें,
तू पालै है मंसा मेरी ।
तेरी जै जै, तेरे दासा,

* इस नाम का मुझे अन्यत्र कोई छन्द नहीं मिला। इसमें २४ गुरु आये हैं, और ८, ८, ८ पर यति है।

त्यागैं हैं भौ-आसा-त्रासा,
संतोषै है आभा तेरी ॥
छाता, लंका लीला मारी,
संभू-औतारी नैं टारी
सारी भै संसारी केरी ।
हे संपाती-त्राता, पाता !
तू है धाता, वाता-जाता !
सो है क्यों मो बेरी देरी ॥ २९ ॥*

कवित्त

बानेबंध, धरम-धुरीन, दीनबंध, सत्य-
संध, सुख-सागर, त्रिलोक में बितान से ।
ज्ञान-गुन-धाम, लोक-लोकनि सनाम, काम
अभिमत-दैन, कल्प-बिटप महान से ॥
छत्रसाल, धेनु-धरा-भूमिदेव पालिबे कों,
असुर-समूह घालिबे कों बज्रपान से ।
भान सीतमान से प्रकासमान, पासवान
साहब श्रीराम के मुसाब हनुमान से ॥ ३० ॥

---

* चरखारी की प्रति में, इस छंद में, पाठान्तर है । उसमें ८, ८, ७ पर यति आने से २३ गुरु हैं, और छंद का नाम 'क्षमा' दिया है । अन्यत्र, 'क्षमा' का यह लक्षण नहीं पाया जाता है । 'क्षमा' तो 'न न ज त ग' या 'न न त ग' का होता है । पन्ना की प्रति में तो दोनों (२८ और २९) छंद एक ही लक्षण के हैं ।

कठिन कुअंक बंक मेटन-समर्थ तुहीं,
करत तिताप दूरि पाप परिताप तैं।
अवध-भुवाल-दास, पूरन-प्रताप-भरयौ,
डरयौ नाहिँ, टरयौ नाहिँ रावन के दाप तैं॥
गजब गुजारयौ, लंक बंक गढ़ जारयौ, दीह
बिपिन उजारयौ, अच्छ मारयौ एक थाप तैं।
कहै छत्रसाल, मोहिँ पालिबो तुम्हारे हाथ,
बालक अबोध कों प्रबोध होत बाप तैं॥ ३१॥

सकल पुरान बेद सास्त्र राज-नीति जानौ,
काव्य कोस, ठोस सर्वगुननि, अनंत हौ।
कहै छत्रसाल, राम-बिजय-निसानु, सर्व
ज्ञान के निधानु, भानु-सिष्य भगवंत हौ॥
दुस्तर दुरंत दुराधर्ष तम-चारिन के
घालक, कृपालु जन-पालक सुसंत हौ।
दुरित-दुरास-दुख-दारिद बिदारु मेरे,
अजय अकंपनारि! बीर बलवंत हौ॥ ३२॥

सरन सुदेहि सीय-सोच के हरन, हरी!
तोहिँ, बदैं बेद, दीनजन की कसक है।
मो सो दीन-दूबरो न, सूबरो मिलैगो तो सो,
और ठौर गयें मोहिँ होति, जू! असक है॥

कहै छत्रसाल, सिंह स्यार के अधीन होय
कहै दुख रोय, कहा सिंह की ठसक है ।
परै बादि मेरी जो फिरादि दादि दीनबंधु !
तेरे द्वार, ठीक मोहिँ धरनी धसक है ॥ ३३ ॥

कृपन-दुवार जाय भरम गँवायबो भो,
रसन रटाय दाँत काढ़िबो बृथा गयौ ।
तू तौ दानवीर महावीर हनूमान धीर,
विजय-ध्वजेस-द्वार कासु न भलो भयौ ॥
कहै छत्रसाल, पालि, लाल अंजनी के, हमैं,
सरन-सुपाल बीर बिरद भलो ठयौ ।
मारिहौ तौ लैहौं पद परम, अनाथ-नाथ !
पालिहौ तौ ह्वैहै मोर कुमति-बिनास यौ ॥ ३४ ॥

असन अघाय पाय तृप्त होय भूखो जब,
अगद-सुमूरि भूरि तबहिँ चखा करै ।
बसन-बिहान बस्त्र पायकैं सिहावै जब,
छत्रसाल, तबै सीत आतप लखा करै ॥
बाल-ब्रह्मचारी तू ही धर्म-धुर-धारी धीर,
गहन मलेच्छ फारि क्यों न दो फका करै ।
जगत दिखाय कहै, 'सूर कौ प्रकास भयौ,'
सूर तबै जानै, जब आँखनि दिखा परै ॥ ३५ ॥

दोहा

जाहिर हाल जहान कौ तुम्हैं, अंजनी-लाल ।
दीन-दयाल ! करौ न क्यों छत्रसाल-प्रतिपाल ॥ ३६ ॥
छत्रसाल, सिय-कंत-प्रिय, संतत संत भनंत ।
जय अनंत-दुख-अंत-कर, बल अनंत हनुमंत ॥ ३७ ॥

श्रीहरिः

अक्षर अनन्य के प्रश्न और तिनकौ उत्तर

[श्रीछत्रसाल प्रति अक्षर अनन्यजू के प्रश्न]

सवैया

धर्म की टेक तुम्हारे बँधी, नृप ! दूसरी बात कहैं दुख पावत ।
टेक न राखत हैं हम काहु की, जैसे कौ तैसो प्रमान बतावत ॥
मानै बुरी भली कोउ भलैँ, नहिँ आसरो काहु कौ चित्त में लावत ।
टेक बिबेक में बीच बड़ो, केहि कारन, अच्छर, आपु बुलावत ॥१॥
जो धरिये हठि टेक उपासन, तौ चरचा महँ चित्त न दीजै ।
जो चरचा महँ राखिये चित्त, तौ ज्ञान बिषै हठि टेक न कीज ॥
जो करिये उर ज्ञान-बिचार, तौ, अच्छर, सार कृपा गुनि लीजै ।
अच्छर में छर अच्छर है, छर-अच्छर अच्छरातीत कहीजै ॥२॥
प्रानि सबै छर-रूप कहावत, अच्छर ब्रह्म कौ नाम प्रमानी ।
जीव कि स्वप्न, सुषुप्ति रु जाग्रति, ब्रह्म-तुरीय-दसा ठहरानी ॥
क्यों तेहि में सुपनो जग भासत, छत्र नरेस ! विचच्छन ज्ञानी !
अच्छर है कि अनच्छर है ? हम कों लिखि भेजबी एक जुबानी ॥३॥

छत्र नरेस बिचच्छन बुद्धि, रहैं तुव सङ्ग बड़े गुन-ज्ञानी ।
आन अखण्ड स्वरूप की राखत, भाखत पूरन ब्रह्म अमानी ॥
क्यों सिसुपाल की आतम-जोति गई फिरि कान्ह में आनि समानी ।
खंडित है कै अखंडित है ? हम कों लिखि भेजबी एक जुबानी ॥४॥
नारि तें होत नहीं नर-रूप, नहीं नर तें पुनि नारि बखानी ।
जाति नहीं पलटै सुपनेहुँ, मरेंहूँ पै भूत चुरैल प्रमानी ॥
क्यों सखियाँ हरि-धाम की आय भईं नर-रूप, क्यों जाति हिरानी;
बेद सही कै ए बात सही ? हमकों लिखि भेजबी एक जुबानी ॥५॥
जाति नहीं पलटै नर-नारि की, क्यों सखियाँ नर-रूप, बखानी ?
जो नर-रूप भईं तौ भईं, पुरुषोत्तम सों ऋतु कैसेंकैं मानी ?
जो पुरुषोत्तम सों ऋतु होय, तौ केतिक नारिन के रससानी ?
या दुबिधा में प्रमान नहीं, हमकों लिखि भेजबी एक जुबानी ॥६॥

[अक्षर अनन्यजू प्रति महाराज छत्रसाल के उत्तर]

सवैया

दूरि करौ दुबिधा दिल सों, सतब्रह्म-स्वरूप कौ रूप बखानौ ।
जाग्रति स्वप्न सुषुप्तिहु कों तजिकैं तुरिया उन कों पहिँचानौ ॥
तीनिहुँ श्रेष्ठ कहे सब बेदनि औ रिषि, हौंहुँ मतो ठहरानौ ।
कारन ज्यों भसमासुर-तारन, कामिनि सो प्रभु आपु दिखानौ ॥१॥
है प्रकृती-पुरुषौत्तम कौ रसु, अच्छरु औ छरु नाहिँ प्रमानी ।
ब्रह्म-प्रताप तें यों पलटै तनु, ज्यों पलटै सब रङ्ग में पानी ॥

जो नर-रूप त्यों नारि-सुरूप कहै उनकों, मति तासु हिरानी।
भूत चुरैल हैं झूठ महा, हम तें सुनि लीजिये एक जुबानी ॥२॥

एक समै पुरुषोत्तम आपु कही निज आतम-जोति की बानी।
खंड में खंड न खंडित है, न अखंड में खंड अखंडित जानी॥
जोति गई इततें सिसुपाल की पूरन कृष्ण में आनि समानी।
खंडित ऐसो अखंडित है, हम तें सुनि लीजिये एक जुबानी ॥३॥

राखत हैं हम टेक उपासन, बात बिबेकहूँ नाहिँ भुलानी।
पीवत हैं चरचा करि अंमृत, भूप छता, रस में रस सानी॥
देखत के नर-नारि कहावत, जीव-स्वरूप की एक निसानी।
कारन की तजबीज करौ, हम तें सुनि लीजिये एक जुबानी ॥४॥

दोहा

हौ अनन्य, नहिँ अन्य कोउ, अच्छर छता अनन्य।
इत रस में रस मानिबी, आय कीजिबी धन्य* ॥५॥

---

* कहते हैं कि महाराज के बुलाने पर महात्मा अक्षर अनन्य उनके यहाँ नहीं गये। नागरी प्रचारिणी सभा की हिन्दी-पुस्तकों की खोज की रिपोर्ट में लिखा है—

Once Maharaja Chhatrasal of Panna invited him to his Court, but he declined to attend.

'मिश्रबंधु-विनोद' में भी इसी बात का समर्थन किया गया है। पर मुझे इस पर विश्वास नहीं होता। महात्मा अक्षर अनन्य अपने प्रश्नों का समुचित उत्तर पाकर तथा महाराज का अपने प्रति सच्चा प्रेम समझ कर अवश्य ही उनके पास पधारे होंगे। 'दोहे' को पढ़ कर भी क्या वह अपने निवृत्ति मार्ग पर डटे रहे होंगे ?

श्रीहरिः

नीति-मंजरी

कवित्त

चाहौ धन, धाम, भूमि, भूषन, भलाई भूरि,
सुजस सहूरजुत रैयत कों लालियौ ।
तोड़ादार घोड़ादार बीरनि सों प्रीति करि,
साहस सों जीति जंग, खेत तें न चालियौ ॥
सालियौ उदंडनि कों, दंडिन कौं दीजौ दंड,
करिकैं घमंड घाव दीन पै न घालियौ ।
बिन्ती छत्रसाल करै होय जो नरेस देस,
रैहै न कलेस लेस, मेरो कह्यौ पालियौ ॥ १ ॥

अगम अनादि जासु सुनत फिरादि दादि
होत है सहाय, भाय अंतर कौ पायबो ।
तासों राज-नीति में अनीति, कहौ, कौन करै,
छत्रसाल भाखतु है बेदनि कौ गायबो ॥
जोपै कोऊ निबल पै सबल जनावै जोर,
ताकौ मद तोरि आपु करै जन-भायबो ।

मानियौ, रे मनुज ! बिचारि उर आनियौ, रे !
जानियौ, रे ! गजब गरीब कौ सतायबो ॥ २ ॥

साखि सुनि हिर्नाकुस और हिरनाच्छहूँ का,
देहु चितु चाहि चारि बेदनि चितायबो ।
जगत-सतावन सो रावन कौ नाम नाहिँ,
कंस निरबंस भो, पुराननि बतायबो ॥
कहै छत्रसाल, भूमिपाल दुरजोधन कौ,
सोध न परतु, यह जतन जतायबो ।
मेरी कही मानियौ, रे ! साँची उर आनियौ, रे !
जानियौ, रे ! गजब गरीब कौ सतायबो ॥ ३ ॥

जाके बीर एक-एक काल तें कराल हुते,
जानैं गहि काल आनि पाटी तें बँधायौ है ।
कुंभकर्न भ्रात, जासु धाक तें सकात लोक,
पूत इन्द्रजीत इन्द्र जीतिकैं कहायौ है ॥
कहै छत्रसाल, इन्द्र बरुन कुबेर भानु,
जोरि-जोरि पानि आनि हुकुम मनायौ है ।
जौन पाप रावन के भौना में न छौना रह्यौ,
तौन पाप लोगनु खिलौना करि पायौ है* ॥ ४ ॥

* इसी समस्या पर एक अज्ञातनामा कवि का भी एक पद्य मिलता है, जिसे मैंने भूमिका में उद्धृत किया है ।

सवैया

लाख घटै, कुल-साख न छाँड़िये, बस्त्र फटै प्रभु औरहूँ दैहै ।
द्रब्य घटै, घटता नहिँ कीजिये, दैहै न कोऊ पै लोक हँसै है ॥
भूप छता, जल-रासि कौं पैरिबो कौनिहुँ बेर किनारे लगैहै ।
हिम्मत छोड़े तें किम्मत जायगी, जायगो काल, कलंक न जैहै ॥ ५ ॥

लोक लगे सब बेदनि सों, अरु बेद लगे सुभ धर्मनि पाहीं ।
धर्म लगे सब राजनि सों, पुनि राज लगे सतमंत्र-कलाहीं ॥
मंत्र लगे सुध बुद्धिन सों, पुनि बुद्धि लगी करनी दृढ़ताहीं ।
छत्र, नरेस यही पहिँचान, बिचारि बिबेक बड़ो जग माहीं ॥ ६ ॥

कुण्डलिया

अपुनो मन-भायौ कियौ गहि गोरी सुलतान ।
सात बार छाँड्यौ नृपति, कुमति करी चहुवान ॥
कुमति करी चहुवान, ताहिं निंदत सब कोऊ ।
असुर बैर इकबार पकरि काढ़े दृग दोऊ ॥
दोउ दीन कौ बैर आदि-अंतहिँ चलि आयौ ।
कहि नृप छत्ता, बिचारि कियौ अपुनो मन-भायौ ॥ ७ ॥

कवित्त

भूलियौ न भूलिकैं धनी कौ नाम आठजाम,
कहैं छत्रसाल, साम बेद-भेद-पढ़िबो ।

निजकुल-रीति, प्रीति सज्जन की भूलियौ न,
भूलियौ न दया-धर्म सर्व कर्म बढ़िबो ॥
सर्नागत पालिबे कों नैकहूँ न भूलियौ, ! जू
हारियौ न हिम्मत, न किम्मत तें कढ़िबो ।
त्रासियौ न कुल कों, अनाथनि बिनासियौ न,
हाँसियौ न हरि के गुनानुवाद मढ़िबो ॥ ८ ॥
कायर के पानि में कृपान कहा काम करैं,
गगन-सुफूल काहू देखे नहिं सुने हैं ।
कृपन-हुलास, बार-नारि कौ बिलास जैसे,
जींगनि-प्रकास, प्रेत-पावक न गुने हैं ॥
बनिया कौ क्रोध जैसो, ऊसर कौ खेत तैसो,
घूसर कौ घास बोय, कहौ, कौन लुने हैं ।
छत्रसाल, राम बिन आन काम कैसे,
जैसे सेमरि कों सेइ सुवा भुवा भूरि धुनेहैं ॥ ९ ॥
एक सो सुभाय एकरूप मिलि जाय जहाँ,
बिलग-उपाय तहाँ नैक न लखातु है ।
रहै आपु जौलौं, तौलौं मीत कों न आवै आँचु,
मीत कौ बिषाद देखि जारै निज गातु है ॥
बिरह-उदेग उफनात छीर नीर बिन,
हृदय-अधार देखि सो दुख बिलातु है ॥

सज्जन सुचेतन की ऐसी प्रीति, छत्रसाल,
पानी और पै की जैसी प्रगट दिखातु है ॥ १० ॥

लगन बिराग बिन, ज्ञान अनुराग बिन,
पुहुप पराग बिन, पाग बिन सर है ।
राज धर्म-न्याय बिन, बनिज उपाय बिन,
तुरँग सुतेज बिन, दान बिन कर है ॥
नारि निज नाह बिन, देस नर-नाह बिन,
सुभट सनाह बिन, सीस बिन धर है ।
जाग देव-भाग बिन, हाटक सुहाग बिन,
छत्रसाल, ताल बिन राग की न दर है ॥ ११ ॥

सुजसु सो न भूषन बिचार सो न मन्त्री त्यों,
साहस सो सूर, कहूँ जोतिषी न पौन सो ।
संयम सी ओषधि न, विद्या सो अटूट धन,
नेह सो न बंधु, औ दया सो पुन्य कौन सो ॥
कहै छत्रसाल, कहूँ सील सो न जीतवान,
आलस सो बैरी नाहिँ मीठो कछु नौन सो ।
सोक कैसी चोट है, न भक्ति कैसी ओट कहूँ,
राम सो न जप और तप है न मौन सो* ॥ १२ ॥

---

* भूमिका देखिये ।

सवैया

कट्टर ताजनो (?), बीन बेबाजनो, भिच्छुक लाजनो, भाजनो देवा ।
माघ के मास में घास कौ तापनो, भूत कौ जापनो, जाँजरो खेवा ॥
पुन्य कौ छूटिबो, विप्र कौ लूटिबो, धूम कौ घूँटिबो, सूम की सेवा ।
एकहु काम के नाहिँ, छता नृप, राम के नाम के जे नहिँ लेवा ॥१३॥

कुण्डलिया

माला के सम नृप, छता, सो संपति सुख लेहि ।
सतबीजनि रोपहि थलनि, लघुहिँ बड़ो करि देहि ॥
लघुहिँ बड़ो करि देहि, लेहि फूले फल पाके ।
फूटै देहि निकासि, मिलहि फूटै बहुधा के ॥
नत उन्नत करि देहि, करहि उन्नत कहँ खाली ।
कंटक छुद्र निवारि, और सीँचहि नृप माली ॥ १४ ॥

कवित्त

राज्य-तरु चंप, चंचरीक सम भूप कह्यौ,
भरत सुअंबरीष जाहिर जनक भें ।
अकनि कियौ न कान स्वारथ-प्रमान कबौं,
नाहिँ लेत लोभ-लाभ-सौरभ तनक भे ॥
नीति बिन जाने भूप कूप बिनपानी सम,
छत्रसाल कहै, धुनि ताँत की भनक भें ।

गनक भे भाँड के, ब्रह्माँड भये ऊमर के,
कैसे वै भूप कूर कूकर भे बनक के ॥ १५ ॥

राम-गुन-गान भलो, बेद कौ प्रमान भलो,
ध्यान भलो स्यामा-स्यामजू की चारु छ्बि कौ ।
गंग-जल-पान भलो, संभु-बर-दान भलो,
गुरु-मुख-ज्ञान सो निदान भलो सब कौ ॥
मीत मेहमान भलो, भट कौ कृपान भलो,
साहब सुजान भलो, जानिबो अदब कौ ।
अबिचल चित्त भलो, धर्म नित-नित्य भलो,
छत्रसाल, सत्य भलो भाषिबो सुकबि कौ ॥ १६ ॥

समुझि, सुजान ! भली भाँति बूझि लीजौ गहि,
जानि परै नीकी साँची मीठी बात छान में ।
साँचे रहौ राम सों, निदान काम आवै अजौं,
कहै छत्रसाल, हाल परम प्रमान में ॥
भूलियौ न दाया, माया देखिकैं न फूलियौ, त्यौं
सूलियौ न दीन कौं, न भूलियौ गुमान में ।
राखियौ प्रतीति प्रीति राम-पद-पंकज में,
राखियौ सदाहिँ जीति दान घमसान में ॥ १७ ॥

सवैया

शब्दनि अर्थ ज्यों, काठ हुतासन, तार के जंत्र में राग कलोलै ।
सुद्ध सुभावनि में, छतसाल, रमै हरि ज्यों सँग संतनि डोलै ॥
सैन में जीव ज्यों, धेनु में छीर रहै, दधि में घृत सार अमोलै ।
फूल में गंध बसै, महि कंचन, पंचनि त्यों परमेसुर बोलै ॥ १८ ॥

कवित्त

जाहिँ भोगि भोगी होत, जन्म प्रति रोगी होत,
कुटुँब-बियोगी औ अयोगी होत जानिकैं ।
जगत दिमानजू कों पलटो प्रवीन लिख्यौ,
भूप छत्रसालजूनैं धर्म नीति छानिकैं ॥
ऐसो धन ख्वारी करै, ज्वारी औ लबारी करै,
चोर, व्यभिचारी करै, त्यागौ याहिँ मानिकैं ।
जोपै या कुबुद्धिहू सों कछू सिद्धि होय जाय,
फेरि न कुबुद्धि कीजै याहिँ उर आनिकैं ॥ १९ ॥

दोहा

छत्रसाल, जन पालिबो, अरिहिँ घालिबो दोय ।
नहिँ बिसारियौ, धारियौ, धरा-धरन कोउ होय ॥ २० ॥
बालक-लौं पालहिँ प्रजा, प्रजा-पाल, छतसाल ।
ज्यों सिसु-हित अनहित सुहित, करत पिता प्रतिपाल ॥ २१ ॥
रैयत सब राजी रहै, ताजी रहै सिपाहि ।

छत्रसाल तेहि राज कौ, बार न बाँको जाहि ॥ २२ ॥
होत बड़प्पन सों बड़ो, छता मते की बात ।
ज्यों पारस के परस तें, सुबरन होत कुधात ॥ २३ ॥
भली करत लागति गहरु, छत्रसाल, निरधार ।
ज्यों न जिवायौ जी सकै, मारत लगै न बार ॥ २४ ॥
कुलवारो एकहि भलो, अकुल भले नहिँ लाख ।
तुलत न सेर सियार सम, छत्रसाल नृप भाख ॥ २५ ॥
छत्रसाल, राजान कौं, बर्जित सदा अनीति ।
द्विरद-दंत की रीति सों, करत न रैयत प्रीति ॥ २६ ॥
छत्रसाल, निज धर्म में, बसत सुकर्म सहेत ।
ज्यों रविससि घट अमित महँ, अमित दिखाई देत ॥ २७ ॥
देखत में नीके, छता, औगुन भरे अथाहिँ ।
सेमर-सुमन सुहावने, फल सुगंध कछु नाहिँ ॥ २८ ॥
कृपनाई, भाई ! न भलि, छत्रसाल के जान ।
दानाई दातान की, बलि-बस भे भगवान ॥ २९ ॥
काल कर्म सुभधर्म के, वर्म चर्म असि जान ।
छत्रसाल नर-पाल, ए नर-पालक-पहिँचान ॥ ३० ॥
छत्रसाल, नृप-तेज तें, दुष्ट-प्रभाव न होय ।
जिमि रवि, उडुगन निसि-करहुँ करत छीनछबि साय ॥ ३१ ॥

निज स्वारथ सो पाप नहिँ, परस्वारथ सो पुन्न ।
दिये इकाई सुन्न ज्यों, होत, छता, दसगुन्न ॥ ३२ ॥
जेहि घोरे के सुम्म दोउ, वार होयँ इकरूप ।
दुख दारिद कों दारिकैं, करिहै निज घर भूप ॥ ३३ ॥
जाके जानत मिलत सब, छता छोनि-पति, आय ।
ताकी पद-रजु, भजु, अरे ! 'हरे-हरे !' कहु गाय ॥ ३४ ॥

श्रीहरिः

फुटकर पद्य

कवित्त

ईसुर अनीसुर में अंतर अनंत ऐसो,
जैसे मित्र चित्र कौ न करतु उदोतु है।
उदर-निमित्त कोऊ नित्त कों अनित्त कहै,
कोऊ परवित्त-काज बन्यौ ब्रह्म-गोतु है॥
कहै छत्रसाल, जैसे भक्ति बिन ज्ञान, जैसे
ध्यान बे-बिराग, जैसे पानी बिन पोतु है।
तैसहीं बिचारु चारु माया कौ प्रचारु सर्व,
हंस बसु नाहिँ पर्महंस कैसे होतु है॥ १॥

पंच-बीस तत्व कौ बनायौ परपंच प्रभु,
जानिकैं अजान नर भूलत टपेलुवा।
गई सङ्ग काहू के नं काहू गहि हाथ राखी,
है गये अनेक बलि बेनु से घपेलुवा॥
कहै छत्रसाल, नंदलाल के निबाहे बिन,
होत है निबाह नाहिँ, है रहे चपेलुवा।

माया मन-मोहिंनी दुनी कों उपराय, फेरि
खाय जाति पापिन ज्यों साँपिन सँपेलुवा ॥ २ ॥

परम कृपालु, निज दासन की रच्छ-पाल,
पच्छपाल-करन, त्रिलोक-बन्द्य, बिरजा ।
कहै छत्रसाल, निराधारनि अधार एक,
देति रण माँझ बीर-धीरनि कों धिरजा ॥
खप्पर त्रिसूल, मुंडमाल उर, भाल चन्द्र,
अग-जग जीव-जाल जानैं सर्व सिरजा ।
एरे मन मेरे ! अब छाँड़ि भ्रम भाइन कों,
गिरजा गुसाँइन के पाइन पै गिरजा * ॥ ३ ॥

आया तौ, सुरत करि नाम कों न गाया कभा,
बीधा पूत-जाया-मोह-माया-भरयाव में ।
कहै छत्रसाल, चित्त-चाया सर्व पाया सुख,
धाया फिरा अर्व-खर्व माया के उपाव में ॥
अनित मनाया, नित सत्य बिसराया, भेद
बेदनि बताया सो न लाया दिल-भाव में ।
पाया नर-जन्म, काया मृतक समान तौलौं,
जौलगि न न्हाया दान-दाया-दरयाव में ॥ ४ ॥

*इसी समस्या पर मैंने एक अज्ञातनामा कवि का भी एक कवित्त देखा है, पर वह इससे बहुत शिथिल है ।

भूप हरिचन्द, मुचकुंद, बलि, जरासन्ध,
सुद्धं सिवि सुमति, दधीचि दान-कर है ।
धरम-धुरीन अंबरीष, मानधाता, रघु,
मोरध्वज, बीर-मनि धीर कर्न बर है ॥
जनक, जजाति, प्रहलाद, निमि, भोज नृप,
भगीरथ-दान सो न आन चराचर है ।
रसना पुनीत करि गीत दान-वीरनि के,
छत्रसाल गाय-गाय मोह-सिन्धु तर है ॥ ५ ॥

सवैया

साख लै आपनी राखी सदासिव खायौ हलाहलु, तायौ न अंगा ।
राखि लियौ तू भगीरथ कों पुनि, स्वर्गहूँ छाँड़ि चली तेहि संगा ॥
पापी सुरापी अपापी किये, छतसाल कहै, मढ़ि मोद-उमंगा ।
बीस बिसे बिरदै अभिलाखिये, राखिये, राखिये, राखिये गंगा ॥ ६ ॥

छप्पय

कोल, कपिल, प्रथु, यज्ञ, दत्त, बावन, नारद, हरि ।
हंस, मोहिनी, सनक, बौद्ध, धन्वंतरि, नरहरि ॥
बद्रीनाथ, कृपालु ऋषभ, पुनि बेद-ब्यास भन ।
परसुराम, श्रीरामचन्द्र, श्रीकृष्ण, हयानन ॥
जय मच्छ, कच्छ, कल्की, जयति धरा-धर्म-श्रुति-उद्धरन ।
अवतार सगुन चौबीस ए, छत्रसाल बंदत चरन ॥ ७ ॥

सतगुरु बिन नहिँ ज्ञान, ज्ञान बिन नहिँ बिराग कह।
बिन बिराग नहिँ ध्यान, ध्यान बिन नाहिँ भक्ति लह॥
भक्ति बिना सुख-सत्य-तत्व अनुभवै न कबहूँ।
अनुभव बिन श्रम सकल बिफल, यह बूझहु सबहूँ॥
कह छत्रसाल, दृढ़ पच्छ करि प्रेम-लच्छना लच्छ लखु।
सब श्रुति पुरान कोविद कहैं, हरि-चरननि निज सुरत रखु॥ ८॥

गणेशजू की बधाई *

जायौ पूत अपरना जैसौ, तैसौ अपर ना जायौ है।
सिंधुर-सीस, ईस ईसनि कौ, नाम गनेस कहायौ है॥
ता अवसर मंगल दिसि-बिदिसिनि, संभु सिवा उमगायौ है।
छत्रसाल, हेरंब-जनम कौ नर्म बधायौ गायौ है॥ ९॥

मंज

जाकों सिव बिरंचि मुनि ध्यावत, सबी लगावत तारी है।
बड़े-बड़े कौ हाल न पाया, रैयत कौन बिचारी है॥
छता, मिला नहिँ पता आजलौं जाकौ, नहिँ निरधारी है।
सो ब्रज गोप-गोपियन के सङ्ग बिहरै बिपिन-बिहारी है॥१०॥

* महाराजने और भी पद रचे होंगे, पर अप्राप्य हैं। मेरे देखने और सुनने में जो बहुत से पद-भजन आये हैं, वे महाराज-कृत प्रतीत नहीं होते। उनकी शैली, भाव और भाषा महाराज की प्रस्तुत रचना से नितांत भिन्न है। अवश्य ही वे पद-भजन, जो उनके नाम से प्रसिद्ध हैं, प्रक्षिप्त हैं।

कवित्त

ध्यानिन में ध्यानी और ज्ञानिन में ज्ञानी अहौं,
पंडित पुरानी प्रेम-बानी अरथाने का।
साहब सों सच्चा, क्रूर कर्मनि में कच्चा, छता,
चंपत कौ बच्चा सेर, सूरबीर बाने का॥
मित्रन कें छत्ता, दीह शत्रुन कों कत्ता सदा
ब्रह्म-रस-रत्ता, एक कायम ठिकाने का।
नाहिँ परवाही, न्यारा नौकिया सिपाही, मैं तौ
नेही, चाह-चाही एक स्यामा-स्याम पाने का॥ ११॥

अमित चरित्र कलि क्रूर के कहाँलौं कहौं,
हौं हूँ तौ कुचालि, चालि कहिकैं सुनाहौं का।
नृपति परीछित कों स्वर्न ह्वै छल्यौ है जानैं,
छत्रसाल, औरनि सें छलनि गनाहौं का॥
छली ही सों छली नेह चोरनि सें करै चोर,
जैसे कें तैसो, खोटो खरेन में भुनाहौं का।
छलन सुभूप बलि, चोर चारु माखन के
नन्द के किसोर सों न भायप मनाहौं का॥ १२॥

जरित जराव राज-आसन सुखासन, औ
बासन निकासन न पाये तहाँ दौ परी।

मोतिन की झालरें झरोखे झारि छार भये,
झिरमिरी जरतरी झार झरि भौं परी ॥
भईं छार छातरीं, कँगूरे, हीर-छाजे छत,
छत्रसाल, रावन के गेह गाज यौं परी ।
राम के प्रताप लंक बंक जारी हनूमान,
सोने के मवास जारे कास कैसी झौंपरी ॥ १३ ॥

दंडक

तेरि ही भक्ति के जक्त आधीन है,
तेरि ही भक्ति विज्ञान-ज्ञाता ।
तेरि ही भक्ति भव-सिंधु की पोत है,
तेरि ही भक्ति भव-भीति-त्राता ॥
तेरि ही भक्ति की शक्ति साँची, छता,
छेमदा, प्रेमदा, नेम-दाता ।
तेरि ही भक्ति तें जक्त पालै हरी,
सम्भु नासै, सृजै, अंब ! धाता ॥ १४ ॥

छप्पय

जय नृसिंह बलरिंह धिंग धौकल धमंक अरि ।
जय नृसिंह जन-पाल, घाल दानव दमंक करि ॥
जय नृसिंह खल-पुंज-दलन भव-भीति-निवारन ।
जय नृसिंह कृत भीम कर्म, वर धर्म-उधारन ॥

जय अतुल तेज नरसिंह, जय हिरनाकुस गहि दलमलो ।
कह छत्रसाल, प्रहलाद-हित कियौ त्रिजग-जन कौ भलो ॥ १५ ॥

जयति बाल रघुलाल, औध-पति-अजिर-बिहारी ।
जयति बाल रघुलाल, जानु-कर-पंकज-चारी ॥
जयति बाल रघुलाल, किलकि कर चंद बुलावन ।
जयति बाल रघुलाल, संभु-उर-मोद-बढ़ावन ॥
जय बाल लाल दसरत्थ के, सब समत्थ, असरन-सरन ।
कह छत्रसाल, रघुलाल के पादु-पदुम तारन-तरन ॥ १६ ॥

कवित्त

नहुष नरेस, मुनि गालव, त्रिसंकु, बेनु,
नीति बिन तिन्हैं हार जीति-सी दिखा परी ।
रीति बिन काज कौ अकाज होत आयौ सदा,
सिंह कों प्रहारयौ खर, ज्यौं सृगालनैं करी ॥
कहै छत्रसाल, नीति, रीति, परमेसुर सों,
प्रीति औ प्रतीति प्रहलाद की निभा भरी ।
पतित-पुनीत, दीनबंधु ! बंदौं पाय तेरे,
बंदि-बंदि जिन्हैं नाथ ! सिंधु में सिला तरी ॥ १७ ॥

नखत, मयंक भानु-मण्डल बिचलि जातो,
मेरु ध्रुव मण्डल समस्त, ऋषि सातो, जू ।

बिगत बिकार अधिकार अंधकार होतो,
प्रलय पयाद निसि द्यौस भर लातो, जू ॥
कर्म फल-प्रेरक कृतज्ञ, छत्रसाल कहै,
ईसुर न होतो तौ जहान मिटि जातो, जू ।
प्रबल प्रभंजन हिरातो सिसुमार-चक्र,
भूमि-गोल बिथरि अनंत में मिलातो, जू ॥ १८ ॥

छत्रसाल, बिपत बितीत होति धीरज में,
संपत में जासु सील सत्य कों पिछानिये ।
परम प्रवीन दान-हीन-प्रति-पालन में,
अभय अछीन जासु बिक्रम बखानिये ॥
अजसु बराय सुद्ध सुजसु प्रसारि राखै,
सहज प्रमान जासु लोक में प्रमानिये ।
एक अवलंब ईस-प्रेम है अधार जाकौ,
सोई संत, सोई साधु, सोई सिद्ध जानिये ॥ १९ ॥

सरन तुम्हारे होय कौन के सरन जाऊँ,
दास अपनाय फेरि भूलिबो न चाइये ।
कहै छत्रसाल, ईति-भीति, सर्व शत्रु-भीति,
घोर कलि-भीति, भव-भीति कों छुड़ाइये ॥
प्रनत-निवाज रच्छपालक पुरान कह्यौ,
सुजसु उचारि चारि बेद गुन गाइये ।

नाथ, खग-नाथ-गामी, जानि, जामी अंतर के,
स्वामी ब्रजराज ! आज बिरद निभाइये ॥ २० ॥

जैसी ज्ञ लिखी जाहिँ ताहिँ तब तैसी होय,
भोरें भाय भोय बृथा सोच में फिटत हैं ।
कहै छत्रसाल, नर ! मन में सयान ठानि,
हानि-लाभ जौन जब तौनहीं भिटत है ॥
सुख-दुख, पाप-पुन्य, अचल अहौनी-हौनी
होति है, पै बुद्धि बल धीरज हिटत है ।
भर्म में न भूलि, भाई ! गाई चारि बेदनि में,
कर्म-रेख अमिट मिटाई न मिटत है ॥ २१ ॥

सवैया

तत्व महान कह्यौ प्रथमै, तेहितें पुनि पाँचहु तत्व, प्रवीनो ।
भेद किये दस-पंच रु चौबिस, तत्व पचीस कहूँ पुनि चीनो ॥
ए सिगरे मिलिकैं रच जीवहिँ कर्म प्रधान तहाँ करि दीनो ।
सो निहचै, कह छत्र नृपाल, रहै प्रभु मध्य उदौ, मधि, लीनो ॥२२॥

न हैं हम विप्र अजामिल, नाथ ! न गीध गयन्द की पाँति बिठारो ।
न हैं गनिका-सवरी-सरि के, हमरो इनतें कुल-गोत नियारो ॥
न हैं सदना, न धना, कबिरा, रयदास की जातिहुँ ना निरधारो ।
छत्ता, न पता कहिबी अपुनो, तुमहीं, प्रभु ! डारौ कहूँ पनवारो ॥२३॥

पब्वि जिमि शृङ्ग पर, भानु तम-तोम पर,
दाव परचंड पर मेघ की तरंग है।
राम दसभाल पर, स्याम सिसुपाल पर,
बारिधि बिसाल पर कुंभज उतंग है॥
केकि अहि-बृन्द पै, तुषार अरविन्द पर,
छत्र, ज्यौं गजेन्द्र पै मृगेन्द्र की उमङ्ग है।
अग्नि तूल-ढेर पर, पौन घन-घेर पर,
दनुज-बटेर पर बाज बजरङ्ग है॥ २४॥*

छप्पय

श्रीगुरु-हरि-पद-कमल अमल, अलि छत्रसाल मन।
पुनि सत-सङ्गति पुष्प-सार, संसार बिटप भन॥
अकथ प्रेम-रस-रतन रतन-निधि मधि अमोल गनि।
अवगाहक प्रथु, जनक, सनक, सुक, अज, सिब धनि धनि॥
प्रहलाद अंबरीषादि ध्रुव भोगतहूँ रस रह बिरस।
परिहरि बिकार चख चारि लखु, राज-नीति प्रभु-प्रीति-बस॥ २५॥

दोहा

काहे मन-भाई करत, पाई यह नर-देह।
छत्रसाल कौ भल मतो, करि प्रभु-चरन सनेह॥ २६॥

---

* महाकवि भूषणकृत 'इन्द्र जिमि शैल पर' आदि सुप्रसिद्ध कवित्त के आधार पर रचा गया प्रतीत होता है। वह शिवाजी पर हैं, यह हनुमानजी पर, अतः इसमें अत्युक्ति के लिये कम स्थान है।

पील-उद्धरन सील-निधि कौ सिधि-दायक दर्स ।
छत्रसाल, गज समुझि यह, अजहुँ करत रज-पर्स ॥ २७ ॥

दीनबंधु दिनप्रति करत दीनजनन के काज ।
राखि लई, छत्रसाल, प्रभु द्रुपद-सुता की लाज ॥ २८ ॥

देखहु, गज पारहि परयौ, छत्रसाल, कहि 'रा' हिँ ।
राम कहनवारेन की कह महिमा महि माहिँ ॥ २९ ॥

निज करनी बरनी कछुक प्रभु-करनी-अनुसार ।
छत्रसाल, तरनीस-बस ज्यों तरनी पतवार ॥ ३० ॥

यह अद्भुत रचना बिरचि लखि हर्षित छत्रसाल ।
खलक बचाई खलनि तें, धन्य धन्य गोपाल ॥ ३१ ॥

सर्वगर्व-गंजन सहज, जन-रञ्जन नँदलाल ।
मघवा-मद-भंजन भजहु तजि कुतर्क, छत्रसाल ॥ ३२ ॥

हाजिर रहत हुजूर में हर हमेस छत्रसाल ।
लखत हर बखत रूपनिधि निधि-दायक नँदलाल ॥ ३३ ॥

मोर मुकुट मुरली लकुटि भृकुटि बनी बन-माल ।
लाल-त्रिभङ्गी-चाल नित लखत खरो छत्रसाल ॥ ३४ ॥

नृप अनन्य, निधिवन-नृपति श्रीललिता हरिदास ।
लाड़ लड़ावत लाल कौं, छत्रसाल हित-आस ॥ ३५ ॥

श्रीस्वामी हरिदास की करत छता नित आस ।*
कुञ्ज-केलि-रसु प्याय जो हरत दृगनि की प्यास ॥ ३६ ॥

श्रीछत्रसाल ग्रन्थावली

समाप्ता

श्रीकृष्णार्पणमस्तु

---

* ३५ और ३६ संख्यक दोहों से, जान पड़ता है, महाराज छत्रसाल रसिकाग्रगण्य श्री ...वामी हरिदासजी के टट्टी संप्रदाय के वैष्णव थे। यह बात आप के अन्य पद्यों से भी झलकती है। दोहों से तो यह बहुत ही अधिक स्पष्ट हो जाती है।

and Sarayu Trust Foundation.